...જય નેમિસૂ...
...ન અ...

सेठिया जैन ग्रन्थमाला पुष्प नं० ६४

* श्रीवीतरागाय नमः *

नीति-शिक्षा-संग्रह

पहला भाग

प्रकाशक—

भैरोंदान जेठमल सेठिया
बीकानेर

सं १९८३ प्रथमावृत्ति न्योछावर ≡)॥

सेठिया जैन प्रिंटिंग प्रेस बीकानेर. (राजपूताना) ता० १६-१०-२६-२०००

TO be had at:—

The Sethia Jain Library

• BIKANER [RAJPUTANA]

भूमिका.

मानव समाज को जैसे भोजन की आवश्यकता होती है, वैसे ही नैतिक और व्यावहारिक ज्ञान की भी आवश्यकता है । व्याकरण से शब्द और अर्थ का ज्ञान होता है, न्याय (तर्क) शास्त्र से पदार्थों का स्वरूप-ज्ञान होता है, धर्मशास्त्र से संसार की असारता, शरीर की नश्वरता और सांसारिक सुख की क्षणभंगुरता का ज्ञान होता है, किन्तु मनुष्य को संसार में कार्यव्यवहार तथा सुख और सभ्यता पूर्वक जीवन निर्वाह का मार्ग दिखाने वाला केवल 'नीति-शास्त्र' है । नीति और व्यवहार सम्बन्धी ज्ञान अन्य विद्याओं से नहीं हो सकता-- जो कि अत्यन्त आवश्यक है ।

संस्कृत-साहित्य-भंडार ऐसे ग्रन्थरत्नों से परिपूर्ण है, तथापि सर्व साधारण हिन्दी के पाठक उनका अमृतमय रस का आस्वादन नहीं कर सकते, इसलिये हमने उन ग्रन्थों से तथा समाचार पत्रों और इतर भाषा की पुस्तकों से सर्वोपयोगी नैतिक और व्यावहारिक शिक्षाओं का संग्रह कर स्व और पर के हितार्थ प्रकाशन करने का कार्य हाथ में लिया है ।

हिन्दी भाषा में ऐसी पुस्तकों का अभाव सा है और जो कुछ इनी गिनी हैं भी, उनका मूल्य अत्यधिक होने से प्रत्येक व्यक्ति उनसे लाभ नहीं उठा सकते,— वे इस उपयोगी ज्ञान से वञ्चित रहते हैं; अतएव हमने लागत से भी कम मूल्य पर निकालना आवश्यक समझा है । इस 'नीति-शिक्षा-संग्रह' के दो भाग हैं, उन में से पहला भाग आपके हाथ में है, इसमें कुल ६१६ शिक्षाएँ है । दूसरा भाग छप रहा है ।

यद्यपि हमने इसकी भाषा सरल और सुवाच्य बनाने में पूर्ण ध्यान रखा है, जिससे कि इससे पढ़े और अध पढ़े सभी लाभ उठा सकें; तथापि वाक्यरचना में कुछ कठिन शब्द आगये हैं, उनका भी सरल अर्थ कर पीछे लगा दिया हैं। हमें पूर्ण विश्वास है कि इससे बालक बालिकाएँ, युवक युवतियाँ, वृद्ध वृद्धाएँ तथा प्रत्येक जाति के व्यक्ति लाभ ले सकेंगे। यह पुस्तक महल में रहने वाले से लेकर झोंपड़ी में रहने वाले तक के लिये सर्वथा उपयोगी है; विशेषतः विद्यार्थियों को तो इसकी एक एक प्रति अपने पास अवश्य रखनी चाहिये; क्योंकि समाज और देश का कल्याण इनही पर निर्भर है।

॥ इति शुभमस्तु ॥

निवेदक—

भैरोंदान जेठमल सेठिया.

नीति-शिक्षा-संग्रह

नीति के वाक्य

१ चार प्रकृति सत्यवादी की हैं—१ अपना वचन पूरा करना, २ अपना देना लेना साफ़ रखना, ३ सोच विचार कर खर्च करना, ४ गुप्त और प्रकट बस्तु में समान स्वभाव होना।

२ चार प्रकृति मिथ्यावादी की हैं—१ झूठी शपथ करना, २ भरोसा देकर विश्वास घात करना, ३ लिखे पर प्रतीति नहीं करना, ४ मिथ्या साक्षी (गवाही) देना तथा ढूंढना।

३ चार प्रकृति अहंकारियों की हैं—१ बड़ों के वचनों का खण्डन करना, २ अपने कहे को श्रेष्ठ मानना, ३ संसार भर में अपने को भला समझना, ४ औरों के प्रणाम का उत्तर न देना।

४ चार प्रकृति पुरुषार्थियों की हैं—१ सत्यवादी होना, २ संसार को असार समझना, ३ साधुओं को दान देने में हर्ष मानना, ४ सुख दुःख में समान रहना।

५ चार प्रकृति असन्तों की हैं—१ विना बुलाये किसी के घर जाना, २ मित्र, शत्रु और ज्ञान हीन से घर का रोना रोना, ३ धनियों के सम्मुख अपने को धनी सा मानना, ४ अपनी आधी रोटी छोड़कर दूसरे की पूरी रोटी पर ध्यान देना।

६ चार प्रकृति कंजूसों की हैं—१ मित्रों से मुँह छिपाना, २ किसी को देते हुए देखकर दुःखी होना और चिन्ता करना, ३ अतिथि को देखकर मुँह फेर लेना ४ अपनी सम्पूर्ण आयु धन संचय करने में बिताना।

७ चार प्राकृति निर्धन होने की हैं—१ आलसी होना, २ सब कामों में मूर्खता करनी, ३ हित को अहित समझना, ४ आय से अधिक खर्च करना।

८ चार प्रकृति सत्पुरुषों की हैं—१ विद्या में प्रेम रखना, २ वृद्ध और साधु की सेवा में सावधान होना, ३ मित्रवर्ग का तथा अपने आदमियों का पालन-पोषण करना, ४ जो कोई अतिथि घर पर आवे तो उस का अतिथि-सत्कर करना।

९ चार प्रकृति मूर्ख की हैं—१ विद्या में उत्साह न होना, २ नीचों का संग करना, ३ नौकर चाकरों के होते हुए भी छोटी २ वस्तुएँ हाटमें खरीदते फिरना, ४ अहंकार में लिप्त रहना।

१० चार प्रकृति गँवारों की है—१ हमेशा अधिक भोजन करना, २ अभक्ष्य चीजों के भक्षण करने में प्रेम रखना, ३ विना कारण सब

से झगड़ना, ४ बुरा उपदेश देकर मनुष्यों को धर्म से भ्रष्ट करना।

११ चार प्रकृति पशुओं की हैं---१ धर्म सेवन करने में हमेशा उदासीन रहना, २ हित अहित को ठीक २ न समझना, ३ विषयों में लोलुपी होना, ४ नीच भाषा में बोलना अर्थात् अश्लील शब्द बोलना।

१२ चार प्रकृति विनीत की हैं---१ सर्वदा सज्जनों का भय करना, २ मनुष्य मात्र से प्रेम करना, ३ दीनों पर हमेशा दयाभाव रखना, ४ विद्वानों की संगति करना।

१३ चार प्रकृति लज्जावान् की हैं---१ मधुरभाषी होना, २ सदा धीरज रखना, ३ चतुरता से काम करना, ४ स्त्रियों में, मेले ठेलों में बहुधा न जाना।

१४ चार प्रकृति निर्लज्ज की हैं---१ पनघट आदि ऐसी जगह बैठना,—जहां स्त्रियों का आना जाना अधिक हो, २ धनवानों के निकट विना प्रयोजन अधिक बैठना, ३ विना विचारे हर एक से बोल बैठना, ४ स्त्रियों से अधिक बात चीत करना तथा उन के अंग देखना।

१६ चार प्रकृति बहुत भली हैं---१ किसी से नहीं मांगना, २ गम्भीरहृदय होना, ३ लज्जा में प्रेम रखना, ४ अपने हिस्से का भोजन भी बांट कर खाना!

चार प्रकृति बहुत बुरी हैं---१ सूम होना, २ अहंकारी होना,

३ निर्लज होना, ४ पूरी मित्रता न होने पर पूर्ण विश्वास करना।

१७चार प्रकृति पुरुष को प्रतिष्ठित करती हैं—१ गुप्त बात किसी से न कहना, २ परधन और परदारा पर दृष्टि न देना, ३ गुरु लोगों से मान न चाहना, ४ जिह्वा से दुर्वचन तथा ग्रामीण वचन न बोलना।

१८चार प्रकृति कठोर हृदय की हैं—१ मित्रों को दुःख देना, २ विना अधिकार प्रवेश करना, ३ विना बुलाये बोलना, ४ जो अपना हाल नहीं जानता, उसके घर जाकर सब घर का हाल कहते रहना।

१९चार प्रकृति अज्ञानता की हैं—१ साधुओं और परदेशियों से हँसी करना, २ सभा में अनधिकार बैठना, ३ वृथा अपवाद करने में तत्पर रहना, ४ छोटे बड़े का ध्यान न करके मनमाना बकना।

२०चार प्रकृति प्रतिष्ठितपुरुषों की हैं—१ बाहर के आदमी को कभी भीतर का न होने देना, २ किसी से किसी तरह की चाह न करना. ३ रिश्तेदार और धनियों के घर में कम जाना, ४ दरिद्र घर की सहायता करना।

२१सब दानों में विद्या दान श्रेष्ठ है। किसी मनुष्य को पांच सात दिन भोजन कराने के बाद भी उसे भूख अवश्य लगेगी।

लेकिन जब आप उसे कोई कला (हुनर) सिखा देगें तो आप को उसे जीवन भर भोजन कराने का सा फल होगा। परन्तु इस बात पर विशेष ध्यान रखना चाहिए कि वह हुनर या धन्धा ऐसा होना चाहिए. जिससे उसका जीवन-निर्वाह अच्छी तरह हो सके। सदा भिखारी बने रहने की अपेक्षा लुहारी सुतारी आदि के धन्धों में से कोई एक आध उपयोगी धन्धा भी श्रेयस्कर है।

२२तुम आहार विहार में हर्ष और शोक के कामों में तथा ऐश और आराममें, हजारों रुपये पानीकी तरह वहा देते हो, और दूसरी तरफ तुम्हारे पड़ोसी के नन्हे२ बच्चे भूख के मारे तड़फ रहे हैं, उन्हें सूखी रोटी का टुकड़ा भी नसीब नहीं होता। लेकिन तुम्हारा कर्त्तव्य. अपने को तथा अपने कुटुम्ब को सुखी बनाने में ही समाप्त हो जाता है। ऐसी हालत में भी तुम जीवदया तथा परोपकार की बड़ी २ बातें बनाते हो।

२२परोपकार तथा सेवा करनी चाहिए, लेकिन परोपकार तथा सेवा करके अपना बड़प्पन नहीं समझना चाहिए।

२३पुस्तकों तथा शास्त्रों का अक्षर-ज्ञान होना शिक्षा नहीं हैं, लेकिन चारित्र का विकास—धार्मिक भाव की जागृति—होना ही शिक्षा है।

शिक्षामणि-माला.

१ खटमल तथा ठंडक का उपाय—गद्दी तकिया भरवाते समय रुई में थोड़ा कपूर डलवाने से गर्मी के दिनों में वे ठंढे रहेगें

तथा उनमें कभी खटसल न होवेंगे।

२नमक को कभी उघाड़ा न रखना चाहिए—नमक को हमेशा ढककर रखना चाहिए, क्योंकि नमक पर छिपकली के बैठ जाने पर उस नमक के खाने वाले को कोढ़ हो जाता है।

३ धातु के बर्त्तनकी सफ़ाई—चतुर मनुष्य निचोड़े हुए नींबू के छिलके फेंक नहीं देते, किन्तु उन छिलकों को नमक के साथ पीसकर, उन से तांबे पीतल के बर्त्तन साफ़ करते हैं।

४ मधु की परीक्षा—मधु की बूंद पानी में डालने पर यदि वह न फैले—वैसी की वैसी ही बनी रहे—तो उसे ठीक समझना चाहिए। अन्यथा बनावटी समझना चाहिए। अथवा जिस मधु को कुत्ता न खावे उसे असली मधु जानना चाहिए।

५अतर की परीक्षा—अतर की दो बूंद कागज पर डालकर उस कागज को अग्नि पर तपाओ, यदि कागज पर के दाग़ उड़ जायँ तो अतर को असली समझना चाहिए, यदि दाग़ न उड़े तो नक़ली समझना चाहिए।

६ सोने की परीक्षा—सोने के गहने पर नाइट्रीक*एसीड की एक बूंद डालते ही यदि सफ़ेद दाग़ हो जावे तो सोनेमें मिलावट समझना चाहिए, और जैसा का तैसा रहे तो असली समझना चाहिए।

* एसीड नाम तेजाब का है, यह जिस जगह लगता है उसे जला देता है। इसलिए इस को सावधानी से काम में लाना चाहिए।

७ चांदी की परीक्षा—चांदी के गहने को सफेद कपड़े पर रगड़ने से यदि कपड़े पर काला दाग पड़ जावे तो उस में सीसे की मिलावट समझना चाहिए, दाग न पड़े तो असली समझना चाहिए ।

८ चीनी में मैल की परीक्षा—काच के प्याले में पानी भरके उस में चीनी डाल दो, यदि नीचे कुछ बैठ जावे तो मैल समझना चाहिए, नहीं तो साफ समझना चाहिए ।

९ शिलाजीत की परीक्षा—गर्म दूध में शिलाजीत घोल लो, दूध ठंढा हो जाने पर उस में थोड़ासा नींबू का सत्व डालने पर यदि वह शिलाजीत-मिश्रित दूध न फटे तो उस शिलाजीत को असली समझना चाहिए, फटजाने पर नकली ।

१० कस्तूरी की परीक्षा—एक दो चाँवल बराबर कस्तूरी लेकर उसे हाथ में थोड़े से पानी के साथ मलो, बाद में साबुन से खूब धो डालो । धोने पर भी हाथ में वैसी ही सुगन्ध बनी रहे तो उसे असली, और सुगन्ध चली जावे तो नकली समझना चाहिए ।

अथवा लहसन के टुकड़े के साथ एक दो चाँवल बराबर कस्तूरी को खूब मलो, यदि लहसन की गन्ध चली जावे और कस्तूरी की गन्ध वैसी ही बनी रहे तो असली, और कम हो जावे

तो नक़ली समझना चाहिए।

११ गोरोचन की परीक्षा—केले के धड़ में डिगरी देकर छेद करके उस में गोरोचन रख दो, एक दो घंटे उस का छेद भर जावे तो उसे असली समझो और न भरे तो नकली।

१२ केसर की परीक्षा—सल्फ्युरीक एसीड (गंधक का तेज़ाब) में केसर डालते ही केसर का रंग काला होकर लाल हो जावे तो असली, और यदि नीला हो जावे तो नक़ली समझना चाहिए।

१३ हिंग की परीक्षा—हिंग को अग्नि में डालते ही यदि वह एक दम जल उठे तो असली, और यदि धुआँ देकर जले तो बनावटी समझना चाहिए।

१४ खटमल भगाने का उपाय—खाट के चारों पायों पर कपूर की पोटली बांधने से अथवा टेसुवा के फ़ूल अथवा अजमायन बांध देने से खटमल भग जाते हैं।

चूहे भगाने का उपाय—तारपीन के तेल में काक के डाट को भिगोकर चूहे के बिल के पास रख दिया जाय तो चूहे भग जाते हैं।

१६ काच की सफ़ाई—चार सेर गर्म पानी में एक बड़ा चमचा मिट्टी का तेल (घासलेट) डालकर बराबर मिलालो, उस पानी से काच का सामान धोने से वह साफ़ हो जाता हैं।

१७ कभी २ लोग छोटी २ बातों का ख़याल नहीं करते जिससे बड़े २ परिणाम निकलते हैं। कई लोगों को नाक का कफ़ ऊपर खींचकर भीतर ले जाने की बुरी आदत होती है। यह कैसी बुरी और गंदी आदत है। दूषित मादे को आमाशय के भीतर ले जाने से अनेक ख़राबियाँ पैदा होती हैं।

१८ कई लोग अपने रूमाल को बहुत गंदा रखते हैं, और फिर तुर्रा यह कि खाने की चीज़ भी उसी में रख लेते और नाक भी उसी से साफ कर लेते हैं तथा हाथ मुँह भी उसी से पोंछ लेते हैं। इस से अनेक रोगों के फैलने का भय रहता है। इसे हर एक मनुष्य भली भांति समझ सकता है।

१९ कितने ही लोगों को जहां तहां थूंकने की आदत होती है। इस से बहुत सी बीमारियां फैलती हैं। जब यह कफ़ सूखकर गर्द के साथ मिलकर हवा में उड़ता हुआ लोगों की सांस में चला जाता है; इससे छाती की बीमारियां उन को भी लग जाती हैं।

२० गर्म के बाद सर्द या सर्द के बाद गर्म चीज़ खाकर कई लोग अपने दांत ख़राब करते रहते हैं। मल मूत्र को रोक रखने की बुरी आदत से कई लोग बहुत से आमाशय व मूत्राशय के रोग सदैव के लिए लगा लेते हैं।

२१ कई लोग चांद की रोशनी में पुस्तकें पढ़कर या सूर्य की ओर देखकर या ख़राब रोशनी में पढ़कर अपनी आखों को

हानि पहुँचाते रहते हैं। कई लोग कठिन गर्मी से आकर गर्म गर्म शरीर के रहते हुए ठण्डा जल पीकर मृत्यु के मुख में तक पतित हो जाते हैं। कई लोग सरदियों में कमरे में कोयले सुलगा कर कमरे के तमाम दरवाज़े बन्दकर सो गये और दूसरे दिन मरे पाये गये।

सत्पुरुषों के कर्त्तव्य-प्रदर्शक ३५ वाक्य—

१ न्याय से धन कमाना।
२ अन्य गोत्र के समान दर्जे वाले की कन्या लेना व देना।
३ शिष्टाचार तथा नीतिमार्ग की प्रशंसा करना।
४ काम क्रोध लोभ मोह मद हर्ष इन छह शत्रुओं को वश में करना।
५ इन्द्रियों को वश में करना।
६ लोकापवाद से डरते हुए पाप से दूर रहना।
७ देशाचार तथा कुलाचार का उल्लंघन न करना।
८ किसी की निन्दा न करना।
९ सत्पुरुषों की प्रशंसा करना।
१० घर में आने जाने के अनेक द्वार न रखना।
११ अपवित्र स्थान में घर न बनाना।
१२ अत्यन्त गुप्त स्थान में न रहना।

१३ अत्यन्त प्रगट स्थान में भी न रहना।

१४ सत्संग करना।

१५ माता पिता की आज्ञा का पालन करना।

१६ उपद्रव वाले स्थान से दूर रहना।

१७ शास्त्र-श्रवण करना

१८ अजीर्ण होते हुए भोजन न करना।

१९ अकाल में भोजन न करना।

२० आय के अनुसार खर्च रखना।

२१ त्रिवर्ग (धर्म अर्थ काम) का परस्पर बाधा रहित सेवन करना।

२२ अतिथि-सत्कार करना।

२३ गुणों में प्रीति करना।

२४ गुणवानों का पक्ष लेना।

२५ निषिद्ध देश में न रहना।

२६ बड़े पुरुषों का आदर-सत्कार करना।

२७ अपने कुटुम्ब का पोषण करना।

२८ विचार कर काम करना।

२९ गुण दोष की विशेष जानकारी रखना।

३० लोक-प्रिय होना।

३१ लज्जावान् होना।

३२ विनयवान् होना ।
३३ दीनों पर दया करना ।
३४ सौम्य दृष्टि रखना ।
३५ कृतज्ञ होना ।

उपदेशमणि-माला.

(१)

१ पात्र के अनुसार बर्त्ताव होता है, दृढ़-प्रकृति वाले की छाप दूसरे पर पड़ती है—उसके स्वभाव के अनुकूल दूसरे को होना पड़ता है ।

२ देश काल और परिस्थिति के अनुसार जहां जिस की ज़रूरत हो, वहां उसके साथ वैसा ही बर्त्ताव करना चाहिए ।

३ आत्म-धर्म पर दृढ़ रहने से मोहादि दुर्गुणों का नाश होता है ।

४ उत्तम शिक्षा देकर अभिमानी का अभिमान दूर करना और उसे अपनी ओर आकर्षित करना, यही सच्चा विनय है । ऊपर की नम्रता तो दिखावा मात्र है-जड़ता रूप है । जब तक अज्ञानता है, तब तक ऊपर की नम्रता उपयोगी है ।

५ विनय करना, लेकिन विवेकपूर्वक करना चाहिए । तुम्हारे प्रति जिस के बुरे विचार हैं, उसका विनय करने से उल्टा परिणाम हो जाता है—'यह दंभी है' इत्यादि ओछे ख़याल उत्पन्न

करने का मौका मिल जाता है। जिससे काम निकालना है, उसका तो विनय करना ही चाहिए।

६ ज्ञानी अज्ञानी का बर्त्ताव ऊपर से समान होने पर भी परिणाम में भिन्नता रहती है। अज्ञानी का बर्त्ताव बदलता रहता हैं; लेकिन ज्ञानी का एकसा रहता है।

७ ज्ञानी अपनी प्रकृति दूसरे के अनुकूल बना लेता है। कोई ज्ञान लेने आता है, तब गुरु के समान आचरण करता हैं। दूसरे की ज्ञान लेने की इच्छा न होने पर उस को ज्ञान देने की इच्छा होती है, तब शिष्य के समान आचरण करता है। मूर्ख के साथ मूर्ख बन जाता है, उसको कोई पहिचान नहीं सकता।

८ अन्धकार और प्रकाश बना ही रहता हैं। कर्मके अनुसार वृत्ति में हेर फेर होता ही रहता है, लेकिन ज्ञानवान् उपदेश द्वारा उसे दूर करते हैं।

९ वस्तु-स्वभाव का ज्ञान होने से ज्ञानी खेद नहीं करता। प्रकृति के नियम को न जाननेवाला ही दु:खी होता है।

१० गुण का नाश नहीं होता; किन्तु निमित्त पाकर उस में परिवर्त्तन हो जाता है।

११ डालियों और पत्तों पर पानी न सींचकर जड़ में ही पानी सींचना चाहिए, इस से डाली और पत्ते स्वयं हरे भरे रहेंगे। इसी तरह आत्म-स्वरूप की प्राप्ति के लिए सब क्रिया करो,

सांसरिक सुख की सामग्री स्वयमेव मिल जावेगी।

१२ दूसरे के अधिकार या कर्त्तव्य के अनुसार चलने का प्रयत्न न करो। तुम्हारी योग्यता ने जिस अधिकार पर तुम्हें नियुक्त किया है, उसी के अनुसार बर्त्ताव करो। अधिकार बढ़ने पर तुम्हें मार्गदर्शक भी मिल जायँगे।

१३ तुम्हें क्या करना है, इसे रोज़ रोज़ दिवस ही तुम्हें सूचित करता रहेगा, चिन्ता न करो।

१४ दूसरे के कर्त्तव्य-मार्ग पर चलते रहोगे तो तुम अपने कर्त्तव्य का पालन पूरी तरह नहीं कर सकोगे

१५ वर्त्तमान में जो कर्त्तव्य तुम्हें सौंपा गया है, उस पर पूरा ख़याल रक्खो। भूत भविष्यत्काल को याद न करो। पहले स्वयं सुधरो, बाद में दूसरों को सुधारो।

१६ सत्ता और पदाधिकार वाले मनुष्यों को अधिक हानि उठानी पड़ती है। सत्ता या पदवी के अभिमान के वश वे दूसरों से ज्ञान का लाभ नहीं ले सकते।

१७ सत्ताधारियों और पदाधिकारियों के आखों के सामने अपने को बड़ा और दूसरेको छोटा मानने का परदा पड़ा रहता है।

१८ छोटे मनुष्य अपनी निर्बलता और अज्ञानता स्वीकार करके दूसरे की सुनता है—शिक्षा ग्रहण करता है; इसलिए उस के आगे बढ़ने की अधिक सम्भावना है।

१९ भक्ति मार्ग में चलने वाला अकेले अपने को ही तार सकता है, और ज्ञान मार्ग में चलने वाला अनेक को।

२० प्रकृतिके नियमों को जानने वाले अपने पर कोई क्लेश नहीं आने देते। नियमों का ज्ञान होने से वे यथायोग्य आचरण कर लेते हैं। शिक्षा द्वारा अपनी प्रवृत्तियों को अपने वश में कर सकते हैं।

२१ उत्तम व्यवहार वाले अपने आचरण में रही हुई स्थूल मलीनता को जप तप दान दया आदि क्रियाओं से दूर कर सकते हैं।

२२ विवेक दृष्टि वाले मनुष्य अपने मन की सूक्ष्म मलीनता को शिक्षा द्वारा दूर कर सकते हैं।

२३ स्थूल मलीनता वाले को व्यवहारक्रिया—दान आदि उपयोगी हैं। दानादि के द्वारा मलीनता कम होती जाती है। बस्ती में रहने वाले उत्तम काम करके ही मलीनता दूर कर सकते हैं।

२४ सूक्ष्म मलीनतावाले निर्जन प्रदेश में रहकर मलीनता कम कर सकते हैं। गाँव और वन दोनों, अधिकारी के भेद से लाभ देने वाले हैं।

२५ सम्पूर्ण जीवों की आत्मा शुद्ध है यदि तुम्हें ऐसा दृढ़ निश्चय है, तो जो कोई तुम्हारे साथ भला या बुरा करे, उस पर

राग या द्वेष अथवा ईर्षा न होनी चाहिए। क्योंकि उन के द्वारा जो कुछ होता है, वह योग्य होता है—पहले किये हुए कर्म के अनुसार होता है।

२६ इस संसार में जो कुछ करना है कर लो। जिन का तुम से सम्बन्ध है, वे सब तुम्हारे सुधारे के लिए ही हैं, ऐसा निश्चय रख कर अपना सुधारा करने लिए उन से गुण ग्रहण कर लो।

२७ दूसरों का जितना आश्रय, उतनी ही पराधीनता और उतना ही दुःख है।

२८ जिसका मन शुद्ध है, उसका शरीर भी शुद्ध है। जिसका मन अशुद्ध (सदोष) है, उस का शरीर शुद्ध होने पर भी अशुद्ध समान है।

२९ प्रत्येक वस्तु के गुण ग्रहण कर लो, अर्थात् सदा गुण ग्रहण करने की आदत रक्खो, दोषों पर दृष्टि न दो।

३० वात पित्त और कफ ये तीन शरीर के दोष हैं। मल विक्षेप और आवरण ये तीन मन के दोष हैं।

३१ जैसा पात्र होता है, वह वैसा और उतना ही ग्रहण कर सकता है, इसलिए उस के सामने वैसा और उतना ही बोलना चाहिए। यह वाणी की शुद्धि है।

३२ मन वचन और काय इन तीनों की शुद्धि होनी चाहिए। इस के होने पर ही संकल्प सिद्ध हो सकता है।

३३ 'यह छोटा है, मैं बड़ा हूं' इस बुद्धि से विक्षेप उत्पन्न होता है; इसलिए इस विक्षेप को समभाव रूपी अग्नि से जलाकर विषमता दूर कर समता उत्पन्न करनी चाहिए।

३४ 'अपना कोई नहीं है' ऐसा मानना सब से ऊंचा मार्ग है। पूरी तरह सचेत रहकर आत्मा से अशुद्धि निकालकर फेंक दो। असीम क्षमा और नम्रता धारण करो।

३५ आवरण का क्षय करने के लिए आत्मदृष्टि रक्खो। आत्मसंबंधी क्रिया करने से ही आवरण का अभाव होता है। ज्यों २ आवरण का क्षय होता है, त्यों २ विक्षेप भी घटता जाता है; क्योंकि आवरण से ही विक्षेप की पुष्टि होती है।

३६ योग्य मनुष्य के साथ बोलो। आग्रही (हठी) मनुष्य के सामने मौन धारण करो। हठी और सामना करने वाले के सम्मुख 'शास्त्र ऐसा कहते हैं' ऐसा कहकर उत्तर दो। अपने ऊपर न रक्खो। नहीं तो विवाद करना पड़ेगा।

३७ त्याग और आत्म-योग (स्वरूप का अनुभव) दोनों को साथ रक्खो। अकेले त्याग में कल्याण नहीं है। त्याग के साथ शुद्ध आत्मस्वरूप का अनुभव होना चाहिए।

३८ यदि आत्म-शुद्धि की इच्छा रखते हो तो बदले की इच्छा न रखकर काम करो। जितना स्वार्थत्याग है उतना परमार्थ है।

३९ दूसरे का अपने पर विरोध भाव देखकर विवेक दृष्टि से

विचार करना चाहिए और भूल ढूँढनी चाहिए। जिस समय चित्त में विकार हो जाय, उस समय अपना ही दोष जानकर, भूल को सुधारना चाहिए।

४० हरएक आत्मा अपनी रक्षा करने में लगे रहते हैं। उन्हें जो कुछ दिखाई देता है, उसे ग्रहण कर लेते हैं, इस बात से उन को लघु समझना उचित नहीं। उस भूल से उसी को हानि उठानी पड़ेगी। भूल सुधारने के लिए प्रयत्न करना हमारा कर्त्तव्य है।

४१ कर्म में भेद है, आत्मा में भेद नहीं। व्यवहार चलाने के लिए कर्म भेद की ज़रूरत है।

४२ कठिनता आने पर स्थान न छोड़ना चाहिए, किन्तु धीरता पूर्वक सहन करना चाहिए। अच्छा संयोग भाग्य से ही मिलता है। कठिनता तुम्हारी कसौटी है। तुम कितने आगे बढ़े, इस की परीक्षा करने वाली है।

४३ क्लेश उत्पन्न हो जावे तब अपनी अवश्य भूल हुई समझना चाहिए। गुण को औगुण या औगुण को गुण मानने से क्लेश पैदा होता है। उस भूल को निकाल कर दूर करने पर ही शान्ति प्राप्त हो सकती है।

४४ चित्त में शांति और शरीर में प्रवृत्ति बनाये रक्खो। कहीं पर विना इच्छा के काम करना पड़े, वहां कर्म का उदय समझ कर काम करो; किन्तु नाराज होकर काम न करो।

४५ दुनियाँ में ज्ञान भरा है, सद्गुण भरे हैं, चाहो सो ले लो। देनेवाला कोई नहीं है, लेनेवाला चाहिए। इच्छा को प्रबल बनाओ, चाहोगे वह मिलेगा।

४६ अभिमान की रक्षा के लिए इच्छा न होते हुए भी अनिष्ट काम करने पड़ते हैं; इसलिए अभिमान को छोड़ना ही योग्य है।

४७ वासना का फल भोगे विना पिंड नहीं छूटता; इसलिए सदा शुभ वासना रखनी चाहिए, जिससे अशुभ वासना को उत्पन्न होने का अवकाश ही न मिले।

४८ यह बाह्य जगत् दुःख रूप नहीं है; लेकिन अपनी आत्मा में उत्पन्न होने वाले संकल्प विकल्प ही दुःख रूप हैं; इसलिए इन का नाश करो।

४९ आत्म-स्वरूप को भूल जाने से कर्मों का बन्ध होता है। कर्मों का उदय होने से चित्त में विक्षेप उत्पन्न होता है। चित्त-विक्षेप से बुरी भली वासनाएँ पैदा होती हैं और उन से अनेक प्रकार के सुख दुःख उत्पन्न होते हैं; इसलिए शुद्ध उपयोग से कर्मों का क्षय करने का प्रयत्न करो।

५० अपनी भूल सुधारने के लिए ही दूसरे लोग कठिनाइयाँ उपस्थित करते हैं, वे परम-उपकारी हैं। चाहे तुम उनके अनुकूल या प्रतिकूल आचरण करो; लेकिन वे तो तुम्हें सुधारने-

वाले—उन्नत करने वाले हैं।

५१ ज्ञान बढ़ाने का मुख्य उपाय उत्तम विचार है। अपने दोषों से अपने को अवश्य कष्ट भोगना पड़ेगा। जागता हुआ मनुष्य इशारे से अपनी भूल समझ कर उसे रोकने का उपाय करता है।

५२ भिन्न भिन्न प्रकृति वाले मनुष्यों के साथ मेल रखने से प्रकृति का अच्छा ज्ञान होता है। उन्नति के अनेक मार्ग हैं, और वे अनेक पात्रों से मिलते हैं। अपने भीतर छिपा हुआ मालिन्य भी उन पात्रों के निमित्त से बाहर निकल पड़ता है।

५३ प्रकृति के अनुकूल अपनी चित्त वृत्ति बना लोगे तो कोई भी व्यक्ति तुम्हारा अपमान न कर सकेगा। धर्म की ध्वजा फहराने वाले को इस नियम का हमेशा स्मरण रखना चाहिए।

५४ जिस समय तुम्हें निराशा उत्पन्न होती है, जिस समय प्रकृति-विरुद्ध तुम्हारी मनोवृत्ति होजाती है, या तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध कोई काम हो जाता है, उस समय सारा संसार तुम्हें विरुद्ध मालूम होने लगता है, इसलिए सब से पहले अपने मन को शान्त रखना सीखो।

५५ पवित्र विचार रक्खोगे तो तुम से विरुद्ध होने का किसी को सामर्थ्य न होगा।

५६ अपनी और दूसरों की इच्छाओं का दुरुपयोग न

करोगे, तो तुम इच्छाओं को जीत सकोगे।

५७, इच्छाएँ घोड़े के समान हैं, जो उस की पूंछ पकड़ता है, वह उसके साथ घसीटा जाता है और गढ़े में गिरता है; इसलिए पूँछ न पकड़कर उस पर सवारी करना सीखो, अर्थात् इच्छा को वश में करो।

५८ दूसरे की ईर्षा करने से वह दोष तुम्हारे भीतर घर कर लेगा; इसलिए ईर्षा न करके गुण ढूंढो—गुणानुरागी बनो, इस से तुम्हारी ओर गुण स्वयं खिंचे चले आवेंगे।

५९ पाप और पुण्य मन के विचारों पर निर्भर हैं—उत्तम विचारों से पुण्य और बुरे विचारों से पाप होता है; इसलिए हमेशा मन को उन्नत और पवित्र करने का यत्न करते रहो।

६० दो काली वस्तुओं के मिलने से एक सफेद वस्तु उत्पन्न नहीं हो सकती, इसी तरह निन्दा करनेवाले व्यक्ति की निन्दा करने से यश नहीं मिलता; लेकिन असत्य-दोष की वृद्धि होती है, इस से वस्तु स्थिति नहीं सुधरती, बिगड़ती जाती है।

६१ अपने पर किये हुए आक्षेपों का निराकरण करने से ही निन्दा टीका-टिप्पणी तथा आत्मा में बुरे विचार उत्पन्न होते हैं, इसलिए इस पर लक्ष्य न देकर सात्विकवृत्ति से विचार किया जावे तो कुछ हानि नहीं है।

६२ जैसा बनना हो, वैसा ही आलम्बन रक्खो।

६३ सुख दुःख का कारण ममत्व है ।

६४ सद्विचार मन को पवित्र बनाने वाला है ।

६५ देहाभिमान संसार का बीज है ।

६६ जिस के तुम मालिक हो उस के बन्धन में भी तुम बंधे हो।

६७ राग द्वेष अधर्म का बीज है ।

६८ समभाव सच्चे ज्ञान का बीज है ।

६९ ममत्व जगत् का बीज है ।

७० सम्पूर्ण इच्छाओं का त्याग मोक्ष का बीज है।

७१ स्वभाव के अनुसार प्रवृत्ति होती है ।

७२ अनुभव ज्ञान, विना भ्रान्ति दूर नहीं हो सकती ।

७३ अधिकार के अनुसार बोलो, जो चाहे उसे ही ज्ञान-दान दो ।

७४ दूसरे को लघु समझने वाला स्वयं लघु है ।

७५ प्रातःकाल सारे दिन का कार्य निश्चय कर लो ।

७६ रात्रि को दिन के किये कार्यों पर विचार करो ।

७७ ज्ञानवान् के पास रहो, दूसरे के आचरण से शिक्षा लेना सीखो !

७८ सुख की अपेक्षा कठिनाइयों का अनुभव करने से मनोबल बढ़ता है

७९ नीच विचार उत्पन्न हों, उस समय सद्विचारों को

सामने खड़ा कर दो। पहले के नीच विचार विलीन हो जावेंगे।

८० खानपान में विवेक रखने से शारीरिक निर्बलता दूर होती है तथा आयु भी बढ़ती है और रोगों की उत्पत्ति में कमी होती है।

८१ विद्या का अभ्यास करने से मानसिक–शक्ति तीव्र और विकसित होती है।

८२ संकट और दुःख के प्रत्यक्ष कारण अपने काम ही हैं।

८३ अपना चारित्र सुधारने तथा शिक्षा ग्रहण करने और उत्तम स्वभाव बनाने एवं अपना जीवन सुखी करने के लिए अपने मानसिक विचार मुख्य कारण हैं।

८४ पूर्व जन्म का संस्कार और जीवन के चारों ओर के संयोग, इन दोनों से इस समय की अपनी स्थिति बनी हुई है।

८५ सुख दुःख का आधार मन की स्थिति पर रहा हुआ है, बाहर के संयोगों को अपनी रुचि के अनुकूल बनाने की अपेक्षा अपने मन को उन के अनुकूल बनाने की आदत डालो। यह सुख प्राप्ति का रहस्य है।

८६ लाखों रुपयों की आय वाली जमींदारी मिलने की अपेक्षा वस्तु की स्थिति तथा बाहर के संयोग को अपने अनुकूल बनाने की आदत का होना अधिक सुखकर है। जो मनुष्य हर एक वस्तु

में गुण देखता है, उसे भारी आपत्ति आ जाने पर भी सुख–शान्ति और आश्वासन मिलता ही रहता है। हँसमुख-स्वभाव और हरएक कार्यके भविष्यको उज्ज्वल तथा आशापूर्ण दृष्टि से देखने की आदत जीवन के सुख का मुख्य साधन है।

८७ शरीर और मन दोनों का नीरोग रहना सुख की उच्च अवस्था मानी गई है। लेकिन मन की नीरोगता प्रायः शरीर की नीरोगता पर अवलम्बित है।

८८ जो रिवाज़ प्रजा को सुख तथा लाभ पहुँचाने वाले हैं, हानि कारक नहीं हैं। उन को उत्तेजना देने के लिए जिस देश में सत्ता तथा शक्ति का उपयोग किया जाता है, उस देशको भाग्यशाली समझना चाहिए।

८९ जैसे उगते हुए वृक्ष को चाहे जैसा नवा सकते हैं, वैसे ही कोमल बाल्य अवस्था में जैसी चाहे वैसी आदत डाल सकते हैं।

९० पहिली अवस्था की छोटी २ भूलें परिणाम में भारी नुकसान करती हैं।

९१ प्रजा के आरोग्य सुख और विज्ञान की वृद्धि होने से ही देश का कल्याण है।

९२ हमेशा किसी न किसी उपयोगी काम धन्धे में लगे रहने की आदत स्त्री पुरुष दोनों को सुख शान्ति के लिए परमावश्यक है।

९३ आलस्य सब को एक सा पतित करने वाला दुर्गुण है। आलसी मनुष्य अपने लक्ष्य तक कभी नहीं पहुंचता। जैसे जंग लोहे को ख़राब कर देता है, वैसे ही आलस्य शरीर को बिगाड़ देता है। आलस्य एक भारी बोझा है, यह एक घोर उपद्रव है। कठिन काम करने से जितना शरीर खराब नहीं होता, उतना आलस्य से होता है। अर्थात् आलस्य महाशत्रु है।

९४ जो काम--धन्धा उत्साह की वृद्धि और चिन्ता से मुक्त करनेवाला है, उसी काम-धन्धे में लगे रहकर जीवन को पूरा करना, जीवन की उच्च दशा है। ऐसी उच्च दशा वाले जीव संसार में विरले ही हैं।

९५ धीर पुरुष आपत्ति आने पर बड़ी बहादुरी और धीरता के साथ उस आपत्ति को गले लगाने के लिए तय्यार रहते हैं। ऐसा करने से उन में स्वावलम्बन का भाव जागृत होता है तथा श्रम करने की तथा सहन करने की शक्ति जीवित रहती है।

९६ संकट में पड़े हुए मनुष्य, उन से अधिक संकट भोगने वाले मनुष्यों की स्थिति पर विचार करते रहें, तो उन्हें आश्वासन मिलेगा तथा दुःख का विस्मरण होगा; इसलिए अपनी ऐसी प्रकृति बनाना अति लाभदायक है।

९७ अपनी वृत्तियां— आचरण पवित्र बनाना चाहिए।

दूसरे के हित साधन का अभ्यास करना चाहिए। यदि निरन्तर उद्योग करने की आदत हो जाय तो जीवन के सामने जो निराशा और उद्वेग रहा हुआ है, उसका भी सहज में निवारण कर सकेंगे।

९८ सचेत हो कर आगे होने वाली घटना का पहले ही उपाय कर लेना, विजयशील दूरदर्शी जीवन का मुख्य लक्षण है। परन्तु जब विवेकसे काम नहीं लिया जाता, तब वह गुण ही दोष रूप हो जाता है। बहुत से लोग भावी संकटकी कल्पना करके मनको संतप्त करते रहते हैं। इतना ही नहीं, लेकिन जो संकट कभी आने वाला नहीं, उस को भी कल्पना द्वारा लाकर चित्त को व्यग्र और दु:खी बना लेते हैं; इस प्रकार दूरदर्शिता गुण का दुरुपयोग नहीं करना चाहिए।

९९ स्वार्थबुद्धि को घटाना चाहिए। स्वार्थबुद्धि के घटने से रहन सहन नियमानुकूल होता है। नि:स्वार्थी जीवन दुर्गुणों का नाश करता है, लालसाओं को दूर करता है, मन को दृढ़ करता है और हृदय को उन्नत बनाकर उस में उच्च विचारों का संचार करता है।

१०० पात्र अपात्र का विचार किये विना दान करने से जन समाज को भारी नुकसान उठाना पड़ता है। संडों मुसंडों को अन्नादि का दान करने से वे आलसी और उद्यम हीन हो जाते हैं। इससे उनके स्वावलम्बन गुण का नाश होता है तथा बुरे

विचारोंको उत्तेजना मिलती हैं। निरुद्योगी भिखारी का समय लड़ाई झगड़े में तथा बुरे कामों में बीतता हैं। ऐसे आदमियों को दान देना क्या, मानो अपराधी-मण्डली उत्पन्न करना है। जो काम समाज की उन्नति में सहायक हों, वे ही करने योग्य हैं।

१०१ जो माता पिता अपने बालक के लाड़ प्यार में आ कर उन्हें स्वच्छन्द चलने देते हैं। अपराध करने पर भी किसी प्रकारकी शिक्षा-दण्ड नहीं देते तथा भावी हानि लाभ का विचार न कर मन मांगी चीज़ ला देते हैं, उनका मन न दुखे सिर्फ इसका खयाल रखते हैं। वे अपने बालक के जीवन में दुःख का बीज बोते हैं।

१०२ मितव्ययी होना, निरन्तर उद्योग में लगे रहना, अपने वचन का पालन करने में तत्पर रहना और भविष्य का विचार कर पहले सचेत रहना, ये गुण इस समय की सुधरी जनता की नीति में पहला स्थान पाते हैं।

१०३ मनुष्य को अनेक काम करने हैं, उन में से सबसे पहला तथा उपयोगी काम अपने चालचलन को दुरुस्त करना है। इस काम में सफलता पाने के लिए अपने विचार और स्वभाव को पवित्र रखने की पूर्ण आवश्यकता है।

१०४ मानसिक विचारों के आधीन ही मनुष्य का वर्ताव होता है। जिसकी मनोवृत्ति दूषित या दुष्ट नहीं, उसे ही वस्तुतः भाग्यशाली समझना चाहिए।

१०५ ढलती अवस्था में मनोविकार शान्त होता जाता है उसके वेग और आवेश में कमी होती जाती है ; लेकिन आदतें दृढ़ और बलवान होती जाती हैं । अतएव आत्मा को सुखी बनाने वाली वृत्ति तथा आदतें बाल्यावस्था में ही डालनी चाहिए ।

१०६ शिक्षक को ऐसी कोशिश करनी चाहिए,जिससे बालक की बाल्यास्था सुख से बीते । प्रौढ़ अवस्था के कठिन विषय बाल्यावस्था में सिखाने से उनकी बढ़ती हुई शक्ति रुक जाती है, इसलिए सरलता के साथ बालक के हृदय में उत्तम २ भावों का बीज बो देना चाहिए ।

१०७ शरीर-सम्पत्ति पर मनुष्य का जितना अधिकार है, उतना अधिकार अपने चारित्र पर भी है । अर्थात् जैसे हम अपनी शक्ति बढ़ा सकते हैं, वैसे ही चारित्र भी ।

१०८ दुष्टस्वभाव स्वार्थ-परायणता और ईर्षा ये मित्रता का नाश करते हैं, तथा विरोध उत्पन्न करते हैं ।

उपदेशमणि-माला.

(२)

(१) दूसरे को अपनी आज्ञा में चलाने की अपेक्षा तुम्हें दूसरे की आज्ञा में चलना पड़े, उस मार्ग का आदर करो ।

(२)दूसरे के स्वच्छन्द आचरण करने से उतनी हानि नहीं, जितनी हानि अपने स्वच्छन्द-आचरण से होती है।

(३)दूसरे पर अंकुश रखने की इच्छा करने की अपेक्षा अपने पर यत्न-पूर्वक अंकुश रखना अधिक लाभदायक है।

(४) अपनी आत्मा पर प्रेम करना पाप नहीं; किन्तु उपेक्षा करना महापाप है।

(५)बुरे विचारों के दास होने के समान दूसरा कोई दुर्भाग्य नहीं!

(६)जो अपने मन पर विजय पाता है,वह समस्त संसार पर विजय पा सकता है। जो अपने को वश में नहीं कर सकता, वह दूसरे को भी वश नहीं कर सकता।

(७)चतुर मनुष्य हमेशा शांत वृत्ति का ही सेवन करते हैं। अपनी वृत्ति को बुरी न होने देने के लिए प्राण-प्रण से चेष्टा करनी चाहिए।

(८)सद् गुणी या दुर्गुणी होना अपने ही हाथ में है। दूसरी सब बातें पराधीन हैं।

(९)अपनी हानि करने वाली वस्तुतः अपनी दुष्ट वृत्तियाँ ही हैं। दूसरी बाहर की वस्तुएँ नहीं।

(१०)लोहार लोहेको तथा सुनार सोनेको घड़कर उसे सुन्दर आकार में लानेके लिए जितनी सावधानी और प्रेम रखता है उतनी

सावधानी और प्रेम तुम अपनी आत्मा की उन्नति के लिए भी नहीं रखते, यह कितनी शर्म की बात है।

(११)विषयलम्पटी तथा व्यसनी मनुष्य पशु से भी नीच है। शरीर का दुरुपयोग तथा अति उपयोग करने से उसे आधि-व्याधि घेर लेती है, तथा असह्य यातना भोगनी पड़ती है। इस में किस का दोष? यह सब दोष उसी विषय-लम्पटी का है।

(१२)सन्तोषी और शान्त मनुष्य का शरीर हृष्ट-पुष्ट होता है, असन्तोषी और क्रोधी मनुष्य का शरीर सूखी लकड़ी के समान निःसत्व होता है; क्योंकि चिन्तातुर ईर्षालु और असंतोषी का मन सदा जलता रहता है;इसलिए उसके शरीरमें रुधिर नहीं बढ़ता।

(१३)छोटे२ बालकों को चुप करने के लिए कई माताएँ वह हौवा आया! वह हाबु आया! वह खाऊ आया! इत्यादि कहकर डराती हैं; लेकिन उन माताओं को इस पर ध्यान देना चाहिए कि इस तरह डराने से बालक हमेशा के लिए डरपोक बन जाते हैं, इतना ही नहीं, कभी २ इस का परिणाम भयंकर हो जाता है।

(१४) अक्सर बीमारियों का मूल कारण अजीर्ण होता है। हमेशा पाचन-शक्ति से अधिक तथा गरिष्ठ आहार करने से अनेक रोगों का बीज बोया जाता है। अल्प तथा सात्विक आहार करने से शरीर हलका और फुर्तीला रहता है। मन में स्फूर्ति रहती है। अधिक तथा गरिष्ठ आहार करने से शरीर भारी हो

जाता है, इन्द्रियों में जड़ता आती और बुद्धि भी कहना नहीं करती है। एक ओर दुनियां के सब रोग तथा दूसरी ओर अजीर्ण-विकार से उत्पन्न हुए रोग, दोनों का समान प्रमाण आता है।

(१५) रसना इन्द्रिय से होने वाला आनन्द क्षणिक है और परिणाम में हानिकारक है। तलवार की अपेक्षा स्वाद इन्द्रियने बहुत जीवों का भोग लिया है। स्वाद की लालसा घटाकर जीवन को बचाओ। शरीर की रक्षा के लिए भोजन किया जाता है, न कि भोजन के लिए शरीर है। शरीर का स्वास्थ्य सादे सात्विक भोजन से ठीक बना रहता है; इसलिए स्वास्थ्य-रक्षा के लिए और अनर्थ से बचने के लिए सादा और सात्विक भोजन करना चाहिए।

(१६) आधि व्याधि कलह बकझक तथा विना प्रयोजन मारपीट सहना ये सब बातें कहां पाई जाती हैं? यदि ऐसा कोई मुझ से पूछे तो मैं उस को यही उत्तर दूंगा कि जहां शराबी लोग मिलकर शराब पीते हैं, वहां यह सब बातें पाई जाती हैं।

(१७)परिश्रम सब कठिनाइयों का पराभव करता है। योग्य परिश्रम स्वयं आनन्दरूप है। जैसे लोहा जंग से खराब हो जाता है, वैसे ही शरीर आलस्य से निकम्मा हो जाता है।

(१८)अज्ञानी और पापी को ही मृत्यु का भय होता है। ज्ञानी और पुण्यशाली को मृत्यु माङ्गलिक क्रिया के समान आदरणीय होती है।

(१९)आहार निद्रा भय और मैथुन ये चार बातें मनुष्य और पशु में समान हैं। जो इन में अनुरक्त रहता है, वह पशु ही है लेकिन जो अहिंसा सत्य क्षमा मार्दव आर्जव सत्य शौच शान्ति भक्ति विरक्ति ज्ञान त्याग आदि धर्म स्वरूप दैवी गुणोंका अनुसरण करता है, वह मनुष्य नहीं देव है।

(२०)स्वर्गके अलौकिक सुखका अनुभव तथा नरकके दारुण दुःख का भोग ये दोनों बातें हमारे ही हाथ में हैं। जो अपना मनुष्य दोष या तिरस्कारका पात्र होता है,इसमें हमारा ही दोष है।

(२१)कोमल वृक्षको जैसा चाहे वैसा नवा सकते हैं,इसी तरह बालकों के अन्तःकरण पर माता पिता तथा शिक्षक जैसे संस्कार डालना चाहें, डाल सकते हैं; इसलिए इस विषय में माता पिता तथा शिक्षक को पूरा ख़याल रखना चाहिए।

(२२)बालक जिसके साथ रहते हैं,उसका असर उसके चारित्र पर विशेष पड़ता है। बालक जैसा देखता है, वैसा ही करता है; क्योंकि बालक अनुकरणशील होते हैं; इसलिए माता पिता तथा शिक्षकों पर बालक की शिक्षा की पूरी ज़िम्मेदारी है।

(२३) बालकों का हृदय सफेद दीवार के समान है। उस पर विद्वान् चित्रकार जैसे चाहे वैसे सुन्दर २ चित्र बना सकते हैं; लेकिन एक वार चित्र बन जाने पर, वह वज्रलेपसा हो जाता है; इसलिए उस पर जैसा चित्र बनाना हो, उस का पूरा

ख़याल रखना चाहिए।

(२४) बालक के हृदय पटल पर उपदेश का उतना प्रभाव नहीं पड़ता, जितना कि हमारे आचरण का पड़ता है; इसलिए जिसे अपने आचरण का संस्कार उस के स्वच्छ हृदय पर डालना है, उसे अपना आचरण उच्च और पवित्र बनाना चाहिए।

(२५) मनुष्य का असली मनुष्यत्व सदाचार है, धनहीन सदाचारी, दुश्चरित्र बड़े से बड़े राजा से भी उत्तम है। सदाचारी से दूसरे लाभ उठा सकते हैं; और दुराचारी से हानि।

२६ जो मनुष्य निष्कलङ्क और निर्दोष होता है, उसका अन्तः-करण पवित्र और चित्त निर्मल रहता है, ऐसी अवस्था में कारावास भी अच्छा है, लेकिन चिन्ता में ग्रस्त रहकर राज्य का भोगना भी निकम्मा है।

२७ अन्तःकरण की शुद्धि, बुद्धिबल, साहस और विनय इन चारों से कार्य की सिद्धि होती है।

२८ मूर्ख शिष्य को शिक्षा देने से, दुष्ट स्त्री का पालन पोषण करने से, दुःखितों के साथ व्यवहार करने से, पण्डित पुरुष भी दुःख पाते हैं।

२९ दुष्ट स्त्री, शठ मित्र, सामने बोलने वाला नौकर, और सर्प वाले घर में निवास, ये चार मृत्यु स्वरूप हैं, इस में बिलकुल सन्देह नहीं।

३० आपत्ति निवारण करने के लिए धन बचाना चाहिए, धन से भी स्त्री की रक्षा करनी चाहिए, स्त्री और धन से भी हमेशा अपनी रक्षा करनी चाहिए।

३१ जिस देश में न आदर न जीविका न बन्धु और न विद्या का लाभ हो, वहां निवास न करना चाहिए।

३२ धनवान् , धर्म के उपदेशक राजा, जलाशय, और वैद्य, ये पांच जहां नहीं हैं, वहां एक दिन भी नहीं रहना चाहिए।

३३ जीविका, अनीति का भय, लज्जा, कुशलता, दानशीलता, ये पांच जहां नहीं हैं, वहां के लोगों के साथ सङ्गति न करनी चाहिए।

३४ काम पड़ने पर नौकर की, दुःख आने पर बन्धुओं की, विपत्ति काल में मित्र की, और विभव का नाश होने पर स्त्री की परीक्षा होती है।

३५ वही बन्धु है, जो रोग आने पर दुःख प्राप्त होने पर दुर्भिक्ष (दुष्काल) पड़ने पर, शत्रुओं से संकट आने पर, राजद्वार (कचहरी) में और श्मशान में साथ देता है।

३६ जो निश्चित वस्तु को छोड़कर अनिश्चित की ओर दौड़ता है, उसकी निश्चित वस्तु का नाश होता है और अनिश्चित तो नष्ट सी ही है।

३७ बुद्धिमान् उत्तमकुल की कन्या के साथ ब्याह करे, चाहे

वह कुरूपा भी क्यों न हो। नीच कुल की सुन्दरी से भी ब्याह न करे; क्योंकि ब्याह समान कुल में ही माना गया है ।

३८ नदी का, शस्त्रधारी का, नखवाले तथा सींग वाले पशुओं का स्त्रियों का और राजवंश का कभी विश्वास न करना चाहिए

३९ विषमें से अमृत को, अशुद्ध पदार्थों में से सोने को, नीच पुरुष से उत्तम विद्या को और दुष्ट कुल से भी स्त्री रत्न को ग्रहण कर लेना चाहिए।

४० पुरुष से स्त्रियों का आहार दूना, लज्जा चौगुनी साहस छहगुना और काम अठगुना होता है।

४१ असत्य, साहस माया मूर्खता अतिलोभ अपवित्रता और निर्दयता ये स्त्रियों के स्वाभाविक, दोष हैं।

४२ जिस का पुत्र आज्ञाकारी है, स्त्री उसकी इच्छा अनुसार चलने वाली है, तथा जो प्राप्त विभव में सन्तोष रखता है, उसको यहां ही स्वर्ग है।

४३ वे ही पुत्र हैं, जो पिता के भक्त हैं। वही पिता है जो अपने पुत्रों का भली भांति पालन करता तथा उन्हें योग्य बनाता है। वही मित्र है जिस पर विश्वास है, और वही स्त्री है जिससे सुख मिलता है ।

४४ पीठ पीछे काम बिगाड़ने वाले, सम्मुख मीठी २ बातें बनाने वाले मित्र को, मुख पर अमृत और भीतर सम्पूर्ण विष से

भरे घड़े के समान छोड़ देना चाहिए ।

४५ कुमित्र पर तो विश्वास किसी प्रकार नहीं करना चाहिए, लेकिन सुमित्र पर भी विश्वास न करना चाहिए; क्यों कि कदाचित् वह कुपित हो जाय तो सब गुप्त बातें प्रकट कर देता है ।

४६ मन से सोचे हुए काम को बचन से प्रकट न करे; किन्तु यत्नपूर्वक उसकी रक्षा करे और गुप्त रूप से उस काम का उपयोग करे ।

४७ मूर्खता दुःख देती है और जवानी भी दुःख देती है, लेकिन दूसरे के घर में का वास अत्यन्त दुःख देने वाला है ।

४८ सब पर्वतों पर माणिक नहीं होते, सब हाथियों में मोती नहीं मिलते, साधु पुरुष सब जगह नहीं मिलते और सब बनों में चन्दन के वृक्ष नहीं होते ।

४६ वह माता शत्रु और पिता वैरी है, जिसने अपने बालक को नहीं पढ़ाया । जैसे हंसों के बीच बगुला शोभा नहीं पाता, वैसे ही वह सभा में शोभा नहीं पाता ।

५० प्यार करने से बहुत दोष होते हैं और दण्ड देने से बहुत गुण; इसलिए पुत्र और शिष्य को दण्ड देना चाहिए, प्यार नहीं करना चाहिए ।

५१ एक श्लोक या आधा श्लोक अथवा चौथाई श्लोक प्रतिदिन अवश्य पढ़ना चाहिए; तात्पर्य यह है कि दान अध्ययन आदि

शुभ कर्म करके दिवस को सार्थक बनाना चाहिए।

५२ स्त्री का वियोग, अपने सम्बन्धियों से अनादर, युद्ध से बचा शत्रु, दुष्ट राजा की सेवा, दरिद्रता, अविवेकियों की सभा, ये बिना आग ही शरीर को जलाते हैं।

५३ नदी तीर के वृक्ष, दूसरे के घर में जाने वाली स्त्री, मन्त्री रहित राजा, ये निःसन्देह शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं।

५४ ब्राह्मणों का बल विद्या है, राजों का बल सेना तथा वैश्यों का बल धन है और शूद्रों का बल सेवा है।

५५ वेश्या धनहीन पुरुष को, प्रजा शक्ति हीन राजा को, पक्षी फलरहित वृक्ष को और अभ्यागत भोजन करके घर को छोड़ देते हैं।

५६ जैसे जले हुए बन को मृग छोड़ देते हैं। वैसे ही ब्राह्मण दक्षिणा लेकर यजमान को त्याग देते हैं, शिष्य विद्या प्राप्त हो जाने पर गुरु को छोड़ देते हैं।

५७ जिस का आचरण बुरा है, जिस की दृष्टि पाप में रहती है, जो बुरे स्थान में बसनेवाला है और जो दुर्जन है, इन पुरुषों के साथ जो मित्रता करता है, उसका शीघ्र ही नाश होता है।

५८ समान जन में प्रीति शोभती है, सेवा राजा की शोभती है, व्यवहार में बनियाई और घर में सुन्दर स्त्री शोभती है।

५९ किस के कुल में दोष नहीं है ? व्याधि ने किसे पीड़ा नहीं दी? किसे दुःख नहीं मिला?तथा किसे हमेशा सुख मिला है?

६० मनुष्य का आचार कुल को बतलाता है । बोली देश को जनाती हैं । आदर प्रेम को प्रकट करता है और शरीर भोजन को जनाता है ।

६१ कन्या उत्तम कुल वाले को देना चाहिए, पुत्र को विद्या पढ़ाना चाहिए, शत्रु को किसी व्यसन में फँसाना चाहिए और मित्र को धर्म कार्य में लगाना चाहिए ।

६२ दुर्जन और साँप, इन दोनों में साँप अच्छा है, दुर्जन अच्छा नहीं । साँप काल आने पर काटता है और दुर्जन पद पद में सताता है ।

६३ राजा आदि बड़े लोग कुलीन पुरुषों का इसलिए संग्रह करते हैं कि वे आदि मध्य और अन्त में— उन्नति साधारण अवस्था और विपत्ति में— साथ नहीं छोड़ते ।

६४ समुद्र प्रलय के समय अपनी मर्यादा को छोड़ देते हैं, तथा भेद की इच्छा भी रखते हैं अर्थात् सूख जाते हैं । लेकिन साधु पुरुष प्रलय होने पर भी अपनी मर्यादा नहीं छोड़ते।

६५ मूर्ख को दूर करना चाहिए, क्योंकि वह देखने में तो मनुष्य है, लेकिन वस्तुतः वह दो पैर वाला पशु है। जैसे अन्धे को कांटा वेधता है, वैसे यह वचन रूपी कांटे से वेधता रहता है।

६६ सुन्दर रूप जवानी और अच्छे कुल में जन्म इन के रहते भी विद्या हीन मनुष्य, गन्धहीन पलाश (ढाक) के फूल के समान शोभा नहीं पाते।

६७ कोयल की शोभा स्वर, स्त्रियों की शोभा पातिव्रत, कुरूपों की शोभा विद्या, और तपस्वियों की शोभा क्षमा है।

६८ कुल के लिए एक व्यक्ति को छोड़ देना चाहिए, गाँव के लिए कुल को त्याग देना चाहिए, देश के लिए गाँव को और अपने लिए पृथिवी को त्याग देना चाहिए, अर्थात् सब को छोड़ देना चाहिए।

६९ उद्योग करने से दरिद्रता नष्ट होती है, जाप करने वाले के पाप नहीं रहता, मौन रहने से कलह नहीं होता, और जागने वाले के नजदीक भय नहीं आता।

७० अतिसौन्दर्य के कारण सीता हरी गई। अति गर्व के कारण रावण मारा गया। अति दान देने से बलि बाँधा गया! इस कारण सब कामों में अति को छोड़ देना चाहिए।

७१ समर्थ लोगों को कौन वस्तु भारी है? उद्योगी पुरुषों को क्या दूर है? उत्तम विद्यावालों को कौन विदेश है? प्रिय बोलने वालों को कौन अप्रिय है।

७२ जैसे सुगन्धित फूलोंवाले एक ही उत्तम वृक्ष से सारा बन सुगन्धि होजाता है, वैसे ही सुपुत्र से सारा कुल सुगन्धित—

शोभित होता है ।

७३ जैसे अग्नि से जलते हुए एक सूखे वृक्ष से सारा बन जल जाता है, वैसे ही एक कुपुत्र से सारा कुल दग्ध-दूषित हो जाता है ।

७४ विद्वान् और सदाचारी एक ही पुत्र से सम्पूर्ण कुल आनन्दित होता है, जैसे चन्द्रमा से रात्रि ।

७५ शोक और सन्ताप देने वाले बहुत से पुत्रों के उत्पन्न होने से क्या लाभ? , कुल को सहारा देने वाला एक ही पुत्र श्रेष्ठ है, जिस के होने पर कुल को विश्राम मिलता है ।

७६ पुत्र को पांच वर्ष तक प्यार करे, दश वर्ष पर्यन्त ताड़ना करे । सोलहवाँ वर्ष आ जाने पर पुत्र के साथ मित्र का सा व्यवहार करे ।

७७ प्लेग आदि का उपद्रव होने पर, शत्रु का आक्रमण होने पर, भयङ्कर दुष्काल पड़ने पर, दुष्ट जन का संग होने पर, जो भाग जाता है, वह जीवित रहता है ।

७८ धर्म अर्थ काम और मोक्ष, इन चार पुरुषार्थों में से जिसके एक भी नहीं है, उसको मनुष्य जाति में जन्म लेने का फल केवल मरण है ।

७९ जहां मूर्खों का आदर-सन्मान नहीं होता, जहां अन्न संचित रहता, जहां पति पत्नी में कलह नहीं होता, वहां लक्ष्मी आप ही आ जाती है ।

८० आयुष्य शुभाशुभ-कर्म धन विद्या और मरण ये पांच, जब जीव गर्भ में रहता है, तब भी नियत हो रह हैं ।

८१ जैसे मछली देखकरके, कछुई ध्यान करके, तथा पक्षी स्पर्श करके अपने बच्चों को सदा पालते हैं, वैसे ही सज्जनों की संगति,-दर्शन, ध्यान और स्पर्श से रक्षा करती है ।

८२ जब तक शरीर नीरोग है, और मृत्यु दूर हैं, तब तक पुण्य आदि सुकर्म करके आत्मा का हित करना उचित है, प्राणों का अन्त हो जाने पर कोई क्या करेगा ? ।

८३ विद्या कामधेनु के समान गुणवाली, अकाल में भी फल देनेवाली, तथा प्रवास में माता के समान हित करनेवाली है विद्वान इसे गुप्त धन मानते हैं ।

८४ सैंकड़ों गुणहीन पुत्रों से एक गुणवान पुत्र ही श्रेष्ठ है । एक ही चन्द्रमा रात्रि के घोर अन्धकार को दूर करता है हजारों तारे नहीं ।

८५ मूर्ख पुत्र के चिरकाल तक जीवित रहने से उत्पन्न होते ही मर जाना अच्छा है । क्योंकि मरजाने से थोड़े ही समय तक दुःख होता है और जीवित रहने से जीवन पर्यन्त दुःख भोगना पड़ता है ।

८६ कुग्राम में वास, नीच कुल की सेवा, कुभोजन, कलह करने वाली स्त्री, मूर्ख पुत्र और विधवा लड़की ये छह विना आग

शरीर को जलाते रहते हैं।

८७ उस गाय से क्या लाभ, जो न दूध देती है और न गर्भ ही धारण करती है। वैसे ही उस पुत्र से क्या लाभ? जो न विद्वान हैं और न धर्मात्मा ही है।

८८ संसार के ताप से जलते हुए मानवों को शान्ति के कारण तीन हैं—पुत्र, स्त्री और सज्जनों की संगति।

८९ राजा लोग एक ही बार आज्ञा देते हैं। विद्वान् पुरुष एक ही बार बोलते हैं। और कन्या एक ही बार दी जाती है ये तीनों बातें एक बार ही होती हैं।

९० अकेले से तप, दो से पढ़ना, तीन से गाना, चारसे मार्ग चलना, पांच से खेती और बहुतों से युद्ध भली भांति होता है।

९१ वही भार्या है, जो पवित्र और चतुर है, वही भार्या है, जो पतिव्रता है। वही भार्या है, जो पति को प्यारी है। वही भार्या है, जो सच बोलने वाली है।

९२ निपूते का घर सूना है। बन्धु हीन के दिशा शून्य है मूर्ख का हृदय शून्य है और सर्वशून्य दरिद्रता है।

९३ अभ्यास न करने से शास्त्र, और अजीर्ण में भोजन, विष समान हो जाता है। दरिद्रको गोष्ठी (सभा या परिवार) विष समान और वृद्ध पुरुष को युवती विष समान होती है।

९४ दया रहित धर्म को छोड़ देना चाहिए, विद्या हीन

गुरु का त्याग करना उचित है। जिस के मुँह से क्रोध टपकता है, ऐसी भार्या को अलग कर देना चाहिए और प्रेमहीन बन्धुओं से दूर रहना योग्य है।

६५ मनुष्यों को मार्ग बुढ़ापा है। घोड़ों को बांध रखना बुढ़ापा है। स्त्रियों को अमैथुन बुढ़ापा है। और कपड़ों को घाम बुढ़ापा है।

६६ किस काल में क्या करना चाहिए, मित्र कौन हैं, देश कौन है, आय व्यय कितना है, मैं किस का हूं, मुझ में क्या शक्ति है, ऐसा बारंबार विचारना चाहिए। इस प्रकार विचार कर जो काम करता है, वह सफलीभूत होकर सदा सुखी रहता है।

६७ घिसना काटना तपाना और पीटना इन चार प्रकारों से जैसे सुवर्ण की परीक्षा की जाती है, वैसे ही दान शील गुण और आचरण इन चारों प्रकारों से पुरुष की भी परीक्षा की जाती है।

६८ भय से तब तक ही डरना चाहिए, जब तक भय नहीं आया है। भय आजाने पर उसे दूर करने का भरसक प्रयत्न करना चाहिए।

६९ एक ही गर्भ से उत्पन्न हुए और एक ही नक्षत्र में जन्म लेने वाले एक से स्वभाव के नहीं होते। जैसे बेर और उस के कांटे।

१०० जिसे किसी प्रकार की इच्छा नहीं है, वह अधिकारी नहीं होगा। जो कामी नहीं है, वह शरीर की शोभा बढ़ाने में प्रेम न रक्खेगा। जो चतुर नहीं है, वह प्रिय नहीं बोल सकेगा। जो स्पष्ट बोलने वाला है, वह ठगिया न होगा।

१०१ मूर्ख विद्वानों से, निर्धन धनिकों से, व्यभिचारिणी स्त्रियां कुलाङ्गनाओं से, और विधवाएँ सधवाओं से द्वेष करती हैं।

१०२ आलस्य से विद्या चली जाती है, दूसरे के हाथ में गया हुआ धन नष्ट हो जाता है। बीज की कमी से खेत ख़राब हो जाता है। विना सेनापति के सेना मारी जाती है।

१०३ अभ्यास से विद्या आती है, शील से कुलीनता, गुण से भलमंसी और नेत्र से कोप ज्ञात होता है।

१०४ धन से धर्म की, चित्त की एकाग्रता से ज्ञान की, मृदुता से राजा की तथा भली स्त्री से घर की रक्षा होती है।

१०५ दान दरिद्रता का नाश करता है। सुशीलता दुर्गति को दूर करती है। बुद्धि अज्ञान का नाश करती है तथा भावना-भक्ति भय को भगाती है।

१०६ काम के समान कोई व्याधि नहीं है। अज्ञान के समान दूसरा वैरी नहीं है। क्रोध के समान दूसरी अग्नि नहीं है और ज्ञान से अधिक कोई सुख नहीं है।

१०७ एक ही आत्मा जन्म मरण करता है। एक ही सुख

दुःख भोगता है। एक ही नरक में पड़ता है। और एक ही आत्मा मोक्ष पाता हैं। इन कार्यों में स्त्री पुत्रादि कोई भी सहायता नहीं कर सकता।

१०८ ब्रह्मज्ञानी (आत्मज्ञानी) को स्वर्ग तृण समान, शूर-वीर को जीवन तृण समान, जितेन्द्रिय को स्त्री तृण समान और निस्पृह को सारा जगत् तृण समान है।

उपदेशमणि-माला

(३)

१ विदेश में मित्र विद्या होती है। घर में मित्र भार्या है। रोगी का मित्र औषध है और मृतमनुष्य का मित्र धर्म है।

२ समुद्र में वर्षा होना वृथा है, अघाये को भोजन व्यर्थ है, धनी को देना व्यर्थ है और दिन में दीपक निरर्थक है।

३ मेघके जल के सामन दूसरा जल नहीं,—आत्मबल के सदृश दूसरा बल नहीं, चक्षु के तेज के समान दूसरा तेज नहीं, और अन्न के तुल्य दूसरा प्रिय पदार्थ नहीं।

४ लक्ष्मी चंचल है, प्राण जीवन और शरीर नश्वर है! इस चर अचर संसार में केवल धर्म ही निश्चल है।

५ पुरुषों में नाई और पक्षियों में कौवा चालाक होता है। पशुओं में सियार और स्त्रियों में मालिन चालाक होती है।

६ जन्म देनेवाला, धर्मोपदेश देनेवाला, विद्या पढ़ानेवाला, अन्न देनेवाला और भय से बचाने वाला,ये पांच पिता गिने जातेहैं।

७ राजा की पत्नी, गुरुपत्नी, मित्रपत्नी, सासु और अपनी जननी ये पांच माता मानी गई हैं ।

८ मनुष्य शास्त्र सुनकर धर्म को जानता है, शास्त्र सुनकर दुर्बुद्धि को छोड़ता है, शास्त्र सुनकर ज्ञान पाता है और मोक्ष को प्राप्त करता है ।

९ पक्षियों में कौवा और पशुओं में मुर्गा चाण्डाल होता है। मुनियों में चाण्डाल पापी तथा सब में चाण्डाल निन्दक होता है ।

१० कांसे का बर्त्तन राख से शुद्ध होता है, तांबे का मैल खटाई से जाता है, स्त्री रजस्वला होने पर शुद्ध होती हैं और नदी धारा के वेग से पवित्र होती है ।

११ राजा और ब्राह्मण भ्रमण करने से आदर पाते हैं, योगी घूमने से पूजा जाता है, लेकिन स्त्री घूमने से नष्ट-भ्रष्ट हो जाती है।

१२ जिस के पास धन है, उस के मित्र और बन्धु होते हैं, वही पुरुष गिना जाता है और वही पण्डित माना जाता है ।

१३ जैसा होनहार होता है, वैसी बुद्धि हो जाती है; वैसे ही सहायक भी मिलजाते हैं ।

१४ जन्म का अन्धा नहीं देखता, काम से अन्धे हुए को हानि लाभ नहीं सूझता, मदोन्मत्त किसी को नहीं देखता, और

अर्थी दोष को नहीं देखता।

१५ जीव आप ही शुभ अशुभ कर्म करता है और उसका फल भी आप ही भोगता है। आप ही संसार में भ्रमण करता है और आप ही उससे मुक्त होता है।

१६ ऋण करने वाला पिता और व्यभिचारिणी माता शत्रु है तथा सुन्दर स्त्री और मूर्ख पुत्र बैरी है।

१७ लोभी को धन से, अभिमानी को नम्रता से, मूर्ख को उसके अनुसार चलके और पण्डित को सचाई से वश करना चाहिए।

१८ राज्य न रहना अच्छा, किन्तु कुराजा का राज्य होना अच्छा नहीं। मित्र का न होना अच्छा, परन्तु कुमित्र को मित्र बनाना योग्य नहीं। शिष्य का न होना उत्तम, है, लेकिन निन्द-नीय को शिष्य बनाना ठीक नहीं। भार्या न हो तो अच्छा है पर कुस्त्री को भार्या करना ठीक नहीं।

१९ दुष्ट राजा के राज्य में प्रजा को सुख कैसे हो सकता, कुमित्र को मित्र करने से सुख कैसे मिल सकता, दुष्ट स्त्री से घर में शान्ति कैसे रह सकती तथा कुशिष्य को पढ़ाने वाले की कीर्ति कैसे हो सकती।

२० सिंह से एक गुण सीखना चाहिए, अर्थात् कार्य छोटा हो या बड़ा, जिस को करना चाहते हैं, उसे सब प्रकार के प्रयत्न

से कर लेना चाहिए।

२१ विद्वान् पुरुष को चाहिए कि बगुले के समान सब इन्द्रियों का संयमन कर देश काल और बल को जानकर सब कार्य सिद्ध करे।

२२ उचित समय पर जागना, युद्ध में उद्यत रहना, बन्धुओं को प्राप्त वस्तु का भाग देना, अपने भुजबल से भोजन ढूंढ़ना, ये चार गुण कुक्कुट से सीखने चाहिए।

२३ ज्यादा खाने की शक्ति रहने पर भी थोड़ेही से सन्तुष्ट होना, गाढ़ निद्रा रहते भी झटपट जागना, स्वामी की भक्ति और शूरता, ये गुण कुत्ते से सीखने चाहिए।

२४ अत्यन्त थक जाने पर बोझा ढोते रहनां, शीत और उष्ण को न गिनना, सन्तुष्ट होकर विचरना, ये तीन गुण गधे से सीखने चाहिये।

२५ गुप्त स्थान में मैथुन करना, समय पर संग्रह करना सावधान रहना, किसी पर एक दम विश्वास न करना, ये पांच गुण कौवे से सीखने चाहिए।

२६ धन का नाश, मन का संताप, गृहिणी का चरित, नीच का वचन और अपमान, इन को बुद्धिमान् प्रकाशित न करे।

२७ अन्न आदि के व्यापार में, विद्या का संग्रह करने में, आहार और व्यवहार में, जो पुरुष लज्जा नहीं रखता, वह सुखी रहता है।

२८ सन्तोष रूपी अमृत से जो तृप्त हैं, उन्हें जो शान्ति-सुख मिलता है, वह इधर उधर मारे फिरने वाले धन के लोभियों को नहीं मिल सकता।

२९ अपनी स्त्री, भोजन और धन में संतोष करना चाहिए; किन्तु पढ़ना जप और दान इन तीन में संतोष कभी न करना चाहिए।

३० गाड़ी से पांच हाथ, घोड़े से दश हाथ, और हाथी से हजार हाथ दूर रहना चाहिए; लेकिन दुर्जन से दूर रहने के लिए देश छोड़ देना चाहिए।

३१ हाथी केवल अंकुश से, घोड़े लगाम से, सींगवाले पशु लाठी से तथा दुर्जन तलवार से दण्ड पाते हैं।

३२ ब्राह्मण भोजन पाकर संतुष्ट होते हैं, मोर मेघ की गर्जना सुनकर हर्षित होते हैं, सत्पुरुष दूसरे की सम्पत्ति देखकर प्रसन्न होते हैं और दुर्जन दूसरे को विपत्ति में पड़ा देखकर खुश होते हैं।

३३ बलवान् बैरी को उसके अनुकूल आचरण करके, दुर्जन शत्रु को उसके प्रतिकूल चलकर वश करे। समान बलवाले शत्रु को विनय से अथवा बल से जीते।

३४ अत्यन्त सरल स्वभाव से नहीं रहना चाहिए, अर्थात् हृदय में तो सरलता रहनी चाहिए, लेकिन दिखावे में अत्यन्त सरलता न रखनी चाहिए। इसका फल वन में जाकर देखो। विचारे सीधे वृक्ष काटे जाते हैं, और टेढ़े वृक्ष वैसे ही खड़े रहते हैं।

३५ कमाये हुए धन की रक्षा दान से ही होती है, जैसे तालाब का जल निकलता रहे तो साफ रहता है और न निकलने पर गंदा हो जाता है ।

३६ अत्यन्त क्रोध, कटुवचन, दरिद्रता अपने कुटुम्बियों से बैर, नीच का संग, कुलहीन की सेवा ये चिह्न प्राय: नरक से आये हुए मनुष्य में पाये जाते हैं ।

३७ यदि कोई सिंह की गुफा में चला जावे तो उसे हाथी के मस्तक के मोती मिलते हैं और सियार के रहने के स्थान में चले जाने पर बछड़े की पूंछ और गदहे के चमड़े का टुकड़ा मिलता है, अर्थात् बड़े के यहां जाने से लाभ होता है, क्षुद्र के यहां जाने से नहीं ।

३८ विद्यारहित जीवन कुत्ते की पूंछ के समान व्यर्थ है, जैसे कुत्ते की पूंछ न तो गोप्य इन्द्रिय को ही ढक सकती है और न मच्छड़ आदि जीवों को ही उड़ा सकती है, वैसे ही विद्या विना का जीवन न तो इस लोक के कर्त्तव्य को समझता है और न परलोक के कर्त्तव्य को ।

३९ मन और वचन की पवित्रता, इन्द्रिय दमन, प्राणिमात्र पर दया, ये परोपकारियों की मुक्ति के चिह्न हैं ।

४० जैसे पुष्प में गंध, तिल में तैल, काठ में आग, दूध में घी, ऊख में गुड़ है, वैसे ही देह में आत्मा है । उसे विवेकदृष्टि से देखो ।

४१ अधम मनुष्य धन ही चाहते हैं, मध्यम धन और मान चाहते हैं। उत्तम मान ही चाहते हैं, क्योंकि महापुरुषों का धन मान ही है।

४२ जैसा अन्न खाया जाता है वैसी ही बुद्धि होती है, जैसे दीपक अंधेरे को खाता है और काजल को उत्पन्न करता हैं।

४३ बुद्धिमानों को चाहिए कि गुणियों को ही धन दें, दूसरों को नहीं। जैसे समुद्र का खारा जल मेघ के मुंह में जाकर मीठा हो जाता है, और वही जल पृथिवी पर चर अचर सब जीवों को जिलाता हुआ कोटिगुणा होकर फिर समुद्र में चला जाता है।

४४ अजीर्ण (अपच) में जल पीना औषध है, पच जाने पर जल बलवर्द्धक है, भोजन करते समय जल अमृत के समान है और भोजन के अन्त में विष के सदृश है।

४५ क्रिया बिना ज्ञान निरर्थक है, अज्ञान से मनुष्य दुःख पाता है, सेनापति बिना सेना मारी जाती है, और स्वामी हीन स्त्रियाँ नष्ट हो जाती हैं।

४६ बुढ़ापे में स्त्रीका मरना, बन्धुओं के हाथ में धन का जाना, और दूसरे के आधीन भोजन, ये तीनों बातें पुरुषों को दुःख देनेवाली हैं।

४७ देव, न काठ में न पाषाण में और न मिट्टीकी बनी मूर्त्ति में है। निश्चय नय से आत्माका शुद्धभाव ही देव है, इसलिए भाव ही

को मुख्य कारण जानकर हमेशा इसे पवित्र रखने का अभ्यास करना चाहिए ।

४८ शान्ति के समान दूसरा तप नहीं, संतोष के बराबर दूसरा सुख नहीं, तृष्णा तुल्य दूसरी व्याधि नहीं और दया से बढ़कर कोई धर्म नहीं ।

४९ क्रोध यमराज है, तृष्णा वैतरणी नदी है, विद्या कामधेनु है और सन्तोष नन्दन वन है ।

५० गुण रूप को भूषित करता है, शील कुल को अलंकृत करता है, सिद्धि विद्या को भूषित करती है और भोग धन की शोभा बढ़ाते हैं।

५१ गुणहीन का सुन्दर रूप व्यर्थ है, शील रहित का कुल निन्दित होता है, सिद्धि के विना विद्या व्यर्थ है, दान-भोग के विना धन निरर्थक है ।

५२ भूमि पर बहता हुआ जल पवित्र है, पतिव्रता स्त्री शुद्ध है, प्रजा में कुशल क्षेम रखने वाला राजा पवित्र है और ब्राह्मण संतोषी पवित्र है ।

५३ असंतोषी ब्राह्मण और संतोषी राजा निंदित गिने जाते हैं, तथा लज्जा वाली वेश्या और लज्जा हीन कुलांगना निन्दा की पात्र होती हैं।

५४ विद्या हीन मनुष्यों के विशाल कुल से क्या लाभ ? विद्वान मनुष्यों का नीच कुल भी देवों से पूजा जाता है ।

५५ संसार में विद्वान ही प्रशंसा पाता है, विद्वान सर्वत्र आदर पाता है। विद्या से सब कुछ मिलता है; विद्या सर्वत्र पूजी जाती है।

५६ सौन्दर्य और यौवन से विभूषित तथा प्रशंसनीय कुल में उत्पन्न हुए मनुष्य भी विद्या विना शोभा नहीं पाते, जैसे गन्ध विना टेसू का फूल।

५७ मांस भक्षण करने वाला, मदिरा पान करने वाला और निरक्षर-मूर्ख इन पुरुषाकार पशुओं के भार से पृथ्वी सदा पीड़ित रहती है।

५८ यदि मुक्ति चाहते हो तो विषयों को विष के समान छोड़ दो तथा क्षमा सरलता दया पवित्रता सत्य त्याग तप को अमृत की नाईं पियो।

५९ जो नराधम आपस में मर्म-भेदी कटु वचन बोलते हैं, वे निश्चय से नष्ट हो जाते हैं, जैसे घी में पड़ कर मक्खी।

६० सब औषधियों में गडूची उत्तम है, सब सुखों में भोजन प्रधान है, सब इन्द्रियों में आंख प्रधान है और समस्त शरीर में मस्तक श्रेष्ठ है।

६१ विद्यार्थी, सेवक, पथिक, भूख से पीड़ित, भयभीत, भंडारी और द्वारपाल, इन सातों को सोते से जगा देना चाहिए।

६२ सांप, राजा, व्याघ्र, बालक, दूसरे का कुत्ता, बर्रे (टांटिया) और मूर्ख, इन सातों को सोते से न जगाना चाहिए।

६३ जिस के क्रुद्ध होने पर न भय है और न प्रसन्न होने पर धनादि का लाभ है तथा न दण्ड और अनुग्रह(दया)हो सकता है उसके रुष्ट होने से क्या होगा ?'

६४ विष हीन सर्प को भी अपना फरा बढ़ाना चाहिए। विष हो या न हो, आडम्बर भय जनक होता है। इसी प्रकार क्षमावान् को भी बनावटी डर दिखाना पड़ता है, अन्यथा उसे व्यवहार में अनेक कष्टों का सामना करना पड़ता है।

६५ दरिद्रता भी धीरता से शोभती है, स्वच्छता से कुवस्त्र भी अच्छा जान पड़ता है, बुरा अन्न भी उष्ण होने से अच्छा लगता है, कुरूप भी सुशीलपने से शोभा पाता है।

६६ धनहीन, हीन नहीं गिनाजाता; किन्तु जो विद्यारूपी रत्न से हीन है, वह सब वस्तुओं से हीन है।

६७ दृष्टि से शोधकर पांव रखना चाहिए, वस्त्र से छानकर पानी पीना चाहिए, शास्त्र के अनुसार शुद्ध वचन बोलना चाहिए तथा मन से सोचकर काम करना चाहिए।

६८ सुख भोगते हुए विद्याभ्यास नहीं हो सकता, इसलिए विद्याभ्यास करते समय सुख की परवाह न करे; क्योंकि सुखार्थी को विद्या कैसे प्राप्त होगी और विद्यार्थी को सुख कैसे होगा?।

६९ कवि क्या नहीं देखते, स्त्रियां क्या नहीं कर सकतीं, कौवे क्या नहीं खाते।

७० भाग्य क्षणभर में रंक को राजा, राजा को रंक, धनी को निर्धन और निर्धन को धनी बना देता है ।

७१ लोभियों का शत्रु याचक और मूर्खों का शत्रु शिक्षा देने वाला होता हैं, व्यभिचारिणी स्त्रियों का बैरी उनका पति और चोरों का बैरी चन्द्रमा होता है ।

७२ जिन को न विद्या है, न तप है, न दान है, न शील है, न गुण है और न कोई सत्कर्म है, वे इस पृथ्वी पर भाररूप होकर मनुष्य रूप में मृग फिर रहे हैं ।

७३ अपात्र को शिक्षा देने का श्रम निष्फल होता है, जैसे मलया-चल के संग से बांस चन्दन नहीं होता, बांस ही बना रहता है ।

७४ जिसको गांठकी बुद्धि नहीं, उसको शास्त्र क्या कर सकते ; जैसे आंखों के अन्धे को दर्पण क्या कर सकता ।

७५ दुर्जन को सज्जन बनाने का संसार में कोई भी उपाय नहीं है । मल का त्याग करने वाली इन्द्रिय सौ वार भी धोई जाय, तोभी श्रेष्ठ इन्द्रिय नहीं हो सकती ।

७६ बड़े पुरुषों के साथ बैर करने से मृत्यु होती है, शत्रु से द्रोह करने पर धन का क्षय होता है, राजा से शत्रुता करने पर नाश होता है और आत्मज्ञानी तपस्वीसे द्वेष करने पर कुल का क्षय होता है ।

७७ व्याघ्र और बड़े बड़े हाथियों से भरे हुए जंगल में वृक्ष के

नीचे फल पत्ते और जल से उदर पूर्णकर, छाल के बस्त्र पहन कर, और तृण की शय्या पर सोकर, जीवन बिताना श्रेष्ठ है; लेकिन धनहीन होकर बन्धुओं में रहना ठीक नहीं।

७८ नाना भांति के पक्षी अनेक दिशाओं से आकर वृक्ष पर बसेरा लेते हैं, और प्रभात होते ही अपनी २ दिशा को चले जाते हैं; इसी तरह कर्म—योग से पुत्र मित्र कलत्र आदि कुटुम्बियों का सम्बन्ध हुआ है, तथा समय पूरा होने पर अपने कर्म के अनुसार यथायोग्य स्थान पर चले जाया करते हैं, इस में हर्ष-विषाद करना मूर्खता है।

७९ सदाचार का मार्ग, सुख की प्राप्ति का मुख्य साधन है तथा दुराचार का मार्ग, परिणाम में दुःख का कारण है।

८० अहंकारी मनुष्य के हृदय में उत्तम शिक्षा का अंकुर नहीं जमता। वे शिक्षाएँ पर्वत पर गिरे हुए पानी के समान ढलक जाती हैं।

८१ उद्यम, कर्त्तव्यपरायणता और उत्तम आचरण ये तीनों चिरस्थायी सुख के आवश्यक अंग हैं।

८२ दुराचार से उत्पन्न हुआ सुख क्षणभङ्गुर है, अनित्य है। तथा वह, क्लेश दुर्बलता और पश्चात्ताप को प्रायः अपने स्थान में छोड़कर जाता है।

८३ परोपकार की उत्कण्ठा का आत्मा में विकास होने से

८४ जिस को बुद्धि है, उसी को बल है, निर्बुद्धि को बल कहां हो सकता ?, देखो छोटे से पशु सियार ने अपनी बुद्धि के बल से बलवान् मदोन्मत्त सिंह को कुँए में उसकी परछाईं द्वारा दूसरा सिंह दिखा कर मार डाला।

८५ उदारता, मृदुभाषण, धीरता और उचित का ज्ञान, ये चार गुण प्रकृति-जन्य हैं, अभ्यास से नहीं मिलते।

८६ हाथी का शरीर स्थूल है, पर वह भी अंकुश के वश रहता है, तो क्या हाथी के बराबर अंकुश है ?, दीपक जलने पर अन्धकार आप ही नष्ट हो जाता है, तो क्या दीपक के समान अन्धकार है?, वज्र गिरने से पर्वतों का चूर्ण हो जाता है, तो क्या पर्वत के समान बज्र है ?, छोटा होने पर भी जिस में तेजस्विता रहती है, वही बलवान् गिना जाता है। स्थूलता बलका कारण नहीं।

८७ घर में आसक्त रहने वालों को विद्या नहीं, मांस-भोजियों को दया नहीं, धन के लोभी को सत्य नहीं, व्यभिचारी को पवित्रता नहीं।

८८ अनेक प्रकार की शिक्षा देने पर भी दुर्जन, सज्जन बन नहीं सकता, जैसे नींब के वृक्ष की जड़ में दूध घी सींचने पर भी वह कभी मीठा नहीं हो सकता।

८९ जो जिस के गुण का महत्त्व नहीं जानता, वह निरन्तर उस की निन्दा किया करता है ; जैसे भीलनी प्राप्त हुए गजमुक्ता को

छोड़कर घुङ्गची को पहनती है।

६० काम, क्रोध, लोभ, जिह्वा का स्वाद, शृङ्गार, खेल, अधिक निद्रा और अतिसेवा इन आठों को विद्यार्थी छोड़ दे।

६१ अपनी आमदनी की चौथाई को बचा रक्खे, और एक चौथाई को व्यापार में लगावे, तथा एक चौथाई को धर्मकार्यों में और अपने भोग में खर्च करे, बची हुई चौथाई को अपने आश्रितों के पालन पोषण में खर्च करे।

६२ बहुत आय वाला धनाढ्य पुरुष अपनी आय में से आधा या आधे से भी अधिक धर्म कार्यों में खर्च करे, बाकी के द्रव्य से संसार के छोटे मोटे काम करे।

६३ धन के हरण करने वाले सात हैं—चोर अग्नि पृथ्वी पानी देवता राजा और कुटुम्बी लोग। चोर जबरदस्ती धनको चुरा लेजाता है। अग्नि काण्ड होने पर जल जाता है। भूकम्प होने पर पृथ्वी में समा जाता है। नदी आदि की बाढ़ आने पर जल में बह जाता है। देवता का प्रकोप होने पर धन लोप हो जाता है। राजा दण्ड आदि देकर ले लेता है और कुटुम्बी लोग लड़ झगड़ कर लेलेते हैं; अर्थात् धन केवल पुण्य के बल से रहता है; इसलिए धर्माचरण कर पुण्य संचय करना चाहिए।

६४ यदि मनुष्य दरिद्री है तो आमदनी की चौथाई अवश्य बचा रखे; क्योंकि संभव है कि पैदा करने वाला बीमार पड़ जाय, या कुछ

दिनों तक व्यापार पट्ट पड़ जाय, या घर में किसीका विवाह आ जाय, या कोई कार्य आ जाय, मकान गिर जाय, या किसी शत्रुसे अदालत लग जाय, या अन्य कोई दैवी घटना उपस्थित हो जाय तो उस समय इकट्ठा किया हुआ धन काम देगा। आमदनी की एक चौथाई धर्म कार्य में अवश्य खर्च करता रहे, और शेष आधे में अपने और अपने कुटुम्ब के काम चलावे। धर्म कार्य में कंजूसी भूल कर भी न करे, क्योंकि परिणाम में सखी सूम दोनों बराबर हो जाते हैं। अर्थात् अन्तमें सूमका भी पैसा चला जाता है। जो मनुष्य धर्म के कामों में खर्च नहीं करता, उसे फिर पछताना पड़ता है; क्योंकि जहां धर्म का अनादर होता है, वहां चोरी होती, आग लगती, अथवा धर्महीन मनुष्यों का धन और भी कई प्रकारों से नष्ट हो जाता है।

९५ बहुत विचार के साथ खर्च करना चाहिए, किसी दूसरे की देखादेखी शक्ति के बाहर न करना चाहिए, या स्वार्थी चापलूसों के मुंह से झूठी प्रशंसा सुनकर धन को लुटा नहीं देना चाहिए। अनुकूल व्यय करने से ही आत्मा को शांति मिलती है। इसलिए सांसारिक कामों में फिजूल खर्च न कर समाज और देश की उन्नति करनेवाले उत्तम २ कामों में धन खर्च करना चाहिए।

९६ आय के अनुसार व्यय करने वाला गृहस्थ प्रतिष्ठित समझा जाता है, और यश, पुण्य, सुख, सम्पत्ति को और धर्म अर्थ कामके अनुरूप सिद्धि को भी पाता है।

९७ हैसियत, अवस्था देश काल तथा जाति का विचार कर पुरुष स्त्री को योग्य कपड़े गहने आदि पहिनना चाहिए। जो मनुष्य अपने धन और अवस्था आदिसे उलटे गहने वस्त्र आदि पहिनता है, उसे संसार हँसता है और वह सब की दृष्टि में बहुत छोटा और अन्यायी समझा जाता है।

९८ जो मनुष्य धनी मानी होकर भी फटा पुराना कपड़ा पहिनता है, या मैला कुचैला कपड़ा पहिनता है, या नंगा भुचंगा बना रहता है, उस कंजूस की संसार में क्या हँसी नहीं होती? अवश्य होती है। उसको लोग जीवित—मृतक या नर—पिशाच कहते हैं।

९९ देश के विरुद्ध वस्त्र भूषण पहिनना उपहासका कारण है। जैसे कोई यूरोपियन भारतवासी की नकल करे, उसी जैसा वेष पहने, वस्त्र भूषण धारण करे तो क्या उसे भारतवासी और यूरोपियन दोनों ही नहीं हँसेंगे। या कोई भारतवासी काला साहब बनता है, तो क्या उसकी हँसी दोनों ही नहीं उड़ाते हैं?।

१०० जिस काम को करने से लोक में निन्दा होती हो, वैसे काम करने से भय करना चाहिए। जो मनुष्य कुलीन या धर्मात्मा है, वही लोकापवाद से डरता है। प्राय: मनुष्य, धन आदि के लोभ में आकर या इन्द्रियों के विषय के आधीन होकर पाप कर्म में प्रवृत्ति करते हैं; लेकिन जिसे लोकापवाद का भय है, वह उक्त पाप से बहुत कुछ बच सकता है। इसलिए गृहस्थ को लोकापवाद से डरना

चाहिए।

१०१ मनुष्य मात्र को पर की निन्दा न करनी चाहिए, अपने से विपरीत आचारण करने वाले को करुणा-दृष्टि से सन्मार्ग पर लाने का पूर्ण प्रयत्न करना चाहिए, या शत्रु को प्रेम का बर्ताव कर अपने अनुकूल बनाने का शक्ति भर प्रयत्न करना चाहिए। यदि इसमें सफलता न हो, अर्थात् वह विपरीत आचरण या शत्रुता का त्याग न करे तो उस पर द्वेष न कर उदासीनता धारण करनी चाहिए।

१०२ भारी आपत्ति के आने पर दीनता नहीं धारण करना चाहिए, किन्तु उसे पूर्व संचित-कर्म का फल समझकर समभाव से सहलेना ही उत्तमता है। यदि उस समय दीनता या अधीरता धारण की जाय तो भी आपत्ति पीछा नहीं छोड़ती, उलटा बुरे कर्मों का बन्ध होता है, ऐसा विचार कर शान्ति धारण करनी चाहिए। शान्ति धारण करने से कर्म अपना फल देकर नष्ट हो जाते हैं और आत्मा स्वच्छ बन जाती है। इसलिए दुःख-संकट आ जाने पर समभाव रखना अति आवश्यक और लाभदायक है।

१०३ किसी के साथ विरोध न करना चाहिए। विरोध करने से वैर बढ़ता है और आत्मा में आर्त्तध्यान और रौद्रध्यान बना रहता है। जिस से आत्मा नरकगति तिर्यञ्चगति का अधिकारी होता है; इसलिए विचारशील पुरुषों को विरोध करने के पहले विचार लेना चाहिए कि इस से मुझे क्या हानि और क्या लाभ होगा।

१०४ कही हुई बात को पशु भी समझ लेते हैं। प्रेरणा करने पर हाथी घोड़े भी ठीक रास्ते पर चलते हैं। परन्तु बुद्धिमान् लोग बिना कहे भी बात को जान लेते हैं; क्योंकि बुद्धि का यही काम है कि दूसरे के इशारे को ताड़ जाया करे।

१०५ बसन्त ऋतु में सब वृक्ष फूलते है और केवल करीर (कैर) वृक्ष के पत्ते नहीं होते, इस में क्या वसन्त का दोष है? यदि दिन में उल्लू को नहीं दीखता तो क्या यह सूर्य का अपराध है? चातक के मुँह में वर्षा की बूंद नहीं पड़ती तो क्या यह मेघ का दूषण है? जो पहले इस आत्मा ने शुभ या अशुभ कर्म बांध लिए हैं, उनको मिटाने के लिए कौन समर्थ हो सकता है।

१०६ सज्जनों की संगति से दुर्जन सज्जन बन जाते हैं; किन्तु दुष्टों के संग से सज्जन दुर्जन नहीं बनते। जैसे पुष्प और मिट्टी का संयोग होने पर पुष्प की सुगन्धि मिट्टी में आ जाती है लेकिन मिट्टीकी गंध पुष्प में नहीं आती।

१०७ साधुओं का दर्शन पुण्यरूप है; क्योंकि साधु तीर्थ रूप हैं। तीर्थ समय से फल देते हैं; किन्तु साधुओं का सत्संग तत्काल फल देता है।

१०८ किसी ज्ञानी साधु को परम सुखी देखकर उन से एक गृहस्थी ने पूछा कि हे महाराज! सुख तो माता पिता भाई मित्र कलत्र और पुत्र से होता है, आप के क्या ये हैं? महात्मा ने

कहा—सत्य मेरी माता है, ज्ञान पिता है, धर्म भाई है, दया मित्र है, शान्ति स्त्री है और क्षमा पुत्र है। इन छह कुटुम्बियों से मैं सदा सुख में मग्न रहता हूं।

उपदेश मणि—माला.

(४)

१ शरीर नश्वर है, धन सम्पत्ति अनित्य है, मृत्यु समीप खड़ी है. इस लिए हमेशा धर्म के कामों में दत्तचित्त होना चाहिये।

२ धर्म में अतिप्रेम, मुख में मिठास, दान में उत्साह, मित्र के साथ निश्छलता, गुरु का विनय, अन्तःकरण में गम्भीरता, आचार में पवित्रता, गुण में अनुराग, शास्त्रों में विशेषज्ञता, रूप में सुन्दरता, और वीतराग देव में भक्ति, ये गुण पुण्यवान् में ही पाये जाते हैं।

३ प्रवास में विद्या मित्र (हितकारी) है। घर में स्त्री मित्र है, रोगीका औषधि मित्र है, और अन्तकालमें प्राणी का धर्म मित्र है।

४ विना विचारे व्यय करने वाला, अनाथ होकर भी कलह में प्रीति रखने वाला, सब जगह आतुरता-व्याकुलता धारण करने वाला, शीघ्र अवनति के गढ़े में गिरता है।

५ बुद्धिमान् आहार की चिन्ता न करे, केवल धर्म की चिन्ता करे; क्योंकि जन्म से ही प्राणियों के साथ आहार उत्पन्न

होता है।

६ जैसे एक एक बूंद के गिरने से सारा घड़ा भर जाता है, इसी प्रकार विद्या धन और धर्म में भी वही नियम समझना चाहिये।

७ पकी अवस्था में भी जो दुर्जन है, वह दुर्जन ही रहता है, सज्जन नहीं बन सकता। जैसे खूब पकी तीती लौकी कभी मीठी नहीं होती।

८ उत्तम काम करके मनुष्यों का क्षण भर जीना भी श्रेष्ठ है। बुरे काम करके लाखों वर्षों तक जीना उत्तम नहीं।

९ दीन पुरुषों का उद्धार करनेमें कटिबद्ध रहना चाहिए, तथा कोई स्वधर्मी जाति बन्धु देशबन्धु या कोई प्राणी यदि आपत्ति में पड़ा हो, उसकी उपेक्षा न कर उसे आपत्ति से छुड़ाने के लिए यथाशक्ति तन और धन से सहायता पहुँचाकर सुखी बनाने में उद्यमशील रहना चाहिए।

१० अपने पर किये हुए उपकार को भूल न जाना चाहिए, भूलनेवाले को लोग कृतघ्नी अधर्मी और नीच कहते हैं। यदि उपकारी के उपकार का बदला चुकाने की शक्ति न हो तो भी सदा उसके उपकार को स्मरण करते हुए उससे उरिन होने की सदा इच्छा रखनी चाहिए और उसका कृतज्ञ बना रहना चाहिए। कृतज्ञ पुरुष में सुशीलता आदि गुणों का प्रादुर्भाव होता है। और कृतघ्नी में उन गुणों का लोप होता है।

११ यदि तुम शत्रु को मित्र बनाना चाहते हो तो तुम उसकी शत्रुता पर ख़याल न कर उसका हर तरह से उपकार करते रहो, वह आप मित्र बन जायगा।

१२ यदि पुण्य-योग से धन—सम्पत्ति प्राप्त हो जाय तो अहंकार न करना चाहिए, बल्कि विशेष नम्र होना चाहिए; क्योंकि नम्रता से मनुष्य, जनता में आदरणीय होता है, तथा आत्मा के विचार निर्मल होते हैं और विचारों की निर्मलता से शुभ कर्मों का बन्ध कर आत्मा उच्च पद पर पहुँचता है।

१३ जघन्य पुरुष विघ्नों के भय से कोई काम प्रारंभ ही नहीं करते, मध्यम पुरुष काम को प्रारंभ करके विघ्न आ जाने पर छोड़ बैठते हैं, तथा उत्तम पुरुष अनेक विघ्नों के आने पर भी प्रारंभ किये हुए कार्य को परिणाम तक पहुँचाये विना नहीं छोड़ते।

१४ धर्म अर्थ और काम रूप त्रिवर्ग का साधन किये विना मनुष्य जन्म पशु समान निष्फल है। उन में भी विद्वान् लोग धर्म को ही प्रधान मानते हैं; क्योंकि धर्म के विना धन और काम (सांसारिक सुख) नहीं मिलता। इसलिए बुद्धिमानों को धर्म कार्य में निरन्तर प्रवृत्ति करनी चाहिए।

१५ विपत्ति के समय आत्मा को उच्च स्थिति में रखना, उत्तम पुरुषों को अपना अनुयायी बनाना, न्याय पूर्वक आजीविका करना प्राण जाने पर अयोग्य काम न करना, दुर्जन से प्रार्थना न करना,

धन हीन होकर भी किसी से याचना न करना, यह तलवार की धार के समान व्रत सज्जनों में ही पाया जाता है।

१६ जो मनुष्य माता पिता आदि बड़ों को नमस्कार करता है, उसे तीर्थ यात्रा का फल होता है; इसलिए उत्तम मनुष्यों को निरन्तर नमस्कार करना चाहिए।

१७ जो मनुष्य अपने उपकारी पूज्यवर्ग का तिरस्कार करता है, वह कभी भी धर्मात्मा नहीं हो सकता। जिस माता पिता और गुरु ने हमारे ऊपर अपार उपकार किया है, उस का बदला किसी प्रकार भी नहीं दिया जा सकता; इसलिए माता पिता और गुरु की सेवा-शुश्रूषा रूप भक्ति अवश्य करनी चाहिए।

१८ जो लोग माता पिता तथा गुरु के हितकारी वचनों की अवहेलना करते हैं, उन्हीं को कुपुत्र समझना चाहिए। क्योंकि माता पिता तथा गुरुका विरोधी, पापी समझा जाता है, और वह इस लोक में निन्दित होकर परलोक में दुर्गति पाता है। माता पिता और गुरु कभी सन्तान तथा शिष्य का बुरा नहीं चाहते, इसलिए उनकी आज्ञा पर कुतर्क करना सुपुत्र या सुशिष्य का काम नहीं।

१६ कई उपाध्याय के बराबर एक आचार्य और कई आचार्यों के तुल्य एक पिता है और पिता से हजार गुणा अधिक माता है। माता अपना सर्वस्व देकर सन्तान की रक्षा करती है। पिता में यह बात कम देखी जाती है। दूसरा कारण यह है कि यह अपनी सन्तान

को गर्भ में पालती है, उस समय का कष्ट अकथनीय है; इसलिए माताका स्वप्न में भी अनादर नहीं होने देना चाहिए।

२० जब तक दूध पिलाती है तब तक पशु माता को मानते हैं, जब तक स्त्री नहीं मिल जाती तब तक अधम पुरुष माता को मानते हैं और मध्यम पुरुष जब तक गृहस्थ के कर्म को करते रहते हैं, तब तक माता को मानते हैं, परन्तु उत्तम पुरुष जब तक माता जीती रहती है, तब तक उसे तीर्थ के समान समझते हैं।

२१ माता, पिता, कलाचार्य, और उनके कुनबे वाले तथा बूढ़े लोग और धर्म का उपदेश देने वाले, ये सभी सत्पुरुषों के मत से गुरुवर्ग हैं।

२२ राजा की स्त्री, गुरु की स्त्री, मित्र की स्त्री, सास और जननी ये पांच माताएँ हैं।

२३ जन्म देनेवाला, उपदेश देनेवाला, विद्या देनेवाला, अन्न देने वाला और भय से बचाने वाला, ये पांचों पिता कहे गये हैं।

२४ सगा भाई, साथ पढ़ने वाला, मित्र, रोग में रक्षा करने वाला, मार्ग में बात चीत करने वाला, ये पांचों भाई हैं।

२५ सुन्दर विचार वाले उत्तम पुरुष को उचित है कि अपनी आत्मा में कृतज्ञता प्रकट करने के लिए और संसार में धर्म की श्रेष्ठता दिखलाने के लिए सदा माता पिता की सेवा शुश्रूषा और

सन्मान करना चाहिए।

२६ जहां अर्थ काम धर्मादिक में बाधा डालने वाले भील कोल आदि हिंसाप्रेमी असभ्य मनुष्य रहते हों, और जो देव गुरु की सामग्री से रहित हों, ऐसे दूषित स्थानों में धर्मोपार्जन करने की इच्छा रखने वालों को कदापि नहीं रहना चाहिए। क्योंकि ऐसे स्थानों में रहने से चोर परस्त्रीगामी और दुष्ट राजा के संसर्ग से धर्मादिक की हानि होती है, और देव दर्शन, गुरु का आगमन और साधर्मिक का सत्संग न होने से नये धर्मादि का उपार्जन भी नहीं हो सकता।

२७ जहां पर अच्छा धर्म हो, अपनी रक्षा का अच्छा साधन हो, व्यापार हो, जल हो, रसोई के लिए सामग्री मिले, अपनी जाति वाले जहां निवास करते हों, ऐसे मनोहर देश में रहना चाहिए। तथा जहां पर गुणी लोग रहते हों, उत्तम उत्तम काम होते हों, पवित्रता रहती हो, प्रतिष्ठा होती हो, गुण का गौरव हो, अलौकिक (लोकोत्तर) ज्ञान की प्राप्ति होती हो, हवापानी अच्छा हो वहां पर बुद्धिमान निवास करे।

२८ जहां पर सन्मान, बुद्धि और विद्या की प्राप्ति न हो, और न बन्धु लोग रहते हों, उस देश में बुद्धिमान् न रहे। जहां पर राजा न हो, या बालक राजा हो, या स्त्री राज्य करती हो, वहां भी नहीं रहना चाहिए। अथवा जहां बालक राजा हो, या दो राजा हों, या मूर्ख

राजा हो, वहां निवास कदापि न करना चाहिए।

२६ अनुचित काम का आरंभ करना, समय के स्वभाव से उलटा चलना, बलवान् के साथ खेंचातानी, और स्त्रियों पर विश्वास करना, ये चारों काम मृत्यु के द्वार हैं।

३० ज्ञानी के साथ मूर्ख, धनी के साथ निर्धन, बली के साथ दुर्बल, समुदाय के साथ अकेला, स्वामी के साथ सेवक, गुरु के साथ शिष्य, यदि बराबरी करे तो क्या होगा? हार के साथ २ दुःख और अप्रतिष्ठा। इसके अतिरिक्त क्या कुछ लाभ भी हो सकता है? कदापि नहीं।

३१ हे कुत्ते! तेरा शरीर अत्यन्त निन्दनीय है; क्योंकि तेरे हाथ दान नहीं देते, तेरे कान शास्त्र नहीं सुनते, चोरी चारी के पदार्थ से तेरा पेट भरता है, तेरे नेत्र साधुओं के दर्शन नहीं करते और तेरे पांव तीर्थ यात्रा नहीं करते हैं, फिर तेरा मस्तक अहंकार से ऊंचा क्यों रहता?।

३२ यदि प्राण कण्ठ तक भी आ जायँ तो भी धर्म विरुद्ध अनुचित कार्य नहीं करना चाहिए, और यदि उत्तम कार्य हो तो प्राण निकलते समय भी कर लेना चाहिए।

३३ चाहे शुभ कर्म हो या अशुभ कर्म, उसे भोगना अवश्य पड़ेगा; क्योंकि भोग किये विना कर्म का क्षय सौ करोड़ युग तक भी नहीं होता; इसलिए कर्म का फल भोगने में आकुल-

व्याकुल नहीं होना चाहिए।

३४ उत्तम नीतिज्ञ लोग निन्दा करें या स्तुति, चाहे लक्ष्मी आवे या चली जावे, आज ही मृत्यु आवे या कई युगों के बाद, इन बातों की परवाह नहीं; किन्तु धीर पुरुष न्याय-मार्ग से कभी विचलित नहीं होते।

३५ राजा नल और पाण्डवों को जुए के व्यसन से राज्य छोड़ना पड़ा। मांस भक्षण से राजा बक को कठिन दुःख भोगना पड़ा, मदिरा पीने से यादव कुल का संहार हुआ। वेश्या गमन से चारुदत्त ने दुःसह दुःख भोगे। शिकार से ब्रह्मदत्त राजा को, चोरी से शिवभूति विप्र को तथा परस्त्री से रावण को नरक की भयंकर यातना भोगनी पड़ी। एक एक व्यसन से उक्त पुरुषों को असह्य संकट भोगना पड़ा। जो मनुष्य अनेक व्यसनों का सेवन करते हैं, उनकी क्या दशा होगी?।

३६ जो मनुष्य राज्य में अधिकार पाकर अपनी आज्ञा, कीर्त्ति, धार्मिक पुरुषों का पालन, दान, भोग और मित्रों का रक्षण, ये छह गुण नहीं सम्पादन कर सका, उसका अधिकार पद प्राप्त करना व्यर्थ है।

३७ द्रव्य का भण्डार पूर्व दिशा में, रसोई घर अग्नि कोण में, शयन-स्थान दक्षिण दिशा में, शस्त्रादि नैर्ऋत्य कोण में, भोजन पश्चिम दिशा में, नाज का संग्रह वायव्य कोण में, जल का स्थान

उत्तर दिशा में, देव-गृह ईशान कोण में रखना शुभ माना गया है।

३८ वैर, वैश्वानर (अग्नि) व्याधि, वाद और व्यसन, ये पांचों वकार वृद्धि पाकर महान् अनर्थ के करने वाले होते हैं। इस लिए इनका आत्मा से स्पर्श भी नहीं होने देना चाहिए।

३९ पति से प्रेम और सेवा—भक्ति करने वाली, पति की घर सम्बन्धी चिन्ता को दूर करने वाली, चतुर, ज्ञानवती, अच्छी सम्मति देनेवाली, घर पर आये हुए अतिथि आदि का सत्कार करनेवाली, मीठे वचन बोलने वाली स्त्री, कल्पलता के समान गृहस्थ की अभिलाषा को पूर्ण करने वाली होती है। उसे लोग गृहलक्ष्मी कहते हैं।

४० पति के चित्त के अनुकूल चलने वाली स्त्री, मन्त्र तन्त्र तथा औषधि के विना अपने पति के मन को वश में कर लेती है। इसलिए जो स्त्री अपने पति को वश करना चाहती है, उसे अपने पति की आज्ञा और इच्छा के अनुकूल चलना चाहिए, पति अपने आप वश हो जायगा।

४१ पुष्ट जंघा, भरे हुए गाल, छोटे और एक सरीखे दांत, लाल कोनों वाले नेत्र और कमल के समान नेत्र, बिम्बफल समान लाल होंठ, उन्नत नासिका, हाथी के समान चाल, चिकना शरीर, गोल मुख, विशाल और कोमल जाँघें, मधुर स्वर और सुन्दर

केश वाली कन्या शुभलक्षण वाली होती है। इस का स्वामी राजा या ऐश्वर्य शाली होता है। वह स्त्री सौभाग्यवती और पुत्रों की माता होती है।

४२ जिस स्त्री के अंग सूखे हों, कुए की तरह गहरे(बैठेहुए) गाल हों, अलग २ दांत हों, तालु ओंठ और जीभ काली हो, आंखे पीली हो, बहुत ठिगनी या बहुत लम्बी हो, शरीर लावण्य हीन हो, भोंहें बहुत नमी हुई हों, स्तन युगल छोटे बड़े हों, जंघा पर रोम हों, जिस के बहुत केश हों, ऐसी सोलह कुलक्षण वाली धन और पुत्र से हीन होती है।

४३ बैठे २ तिनके तोड़ा करना, ज़मीन खुदरना, उंगलियाँ चटकाना, भोजन करते समय ज़मीन पर हथेली टिकाकर बैठना निसास डालना, माथे पर हाथ लगाकर बैठना, पांव में आँटी डालकर सोना, चलते हुए खाना, हँसते हँसते बातचीत करना, दो आदमियों की बात चीत में अनधिकार प्रवेश करना, ये सब ऐब में शामिल हैं, इन्हें यत्न पूर्वक टालना चाहिए।

४४ इस जगत् में यदि तुम्हें सब से उत्तम चीजें ढूंढना है, तो वे ये हैं, स्वच्छ वायु, उमदा जल, उत्तम पथ्य भोजन, निरोग शरीर, और पवित्र अन्तःकरण।

४५ गरीब मनुष्य में यदि उद्योग शीलता और क्षमा, ये दो गुण हों तो भी वह अपने जीवन को सुखी बना सकता है, परन्तु श्रीमंतों

में तो यदि उदारता दानशीलता, सदाचार दीर्घदर्शिता, इन्द्रियदमन, इत्यादि गुण हों, तभी वे अंकुश में रह सकते हैं, नहीं तो उनका अधःपात हुए विना नहीं रहता।

४६ आगे होने वाली कमाई की आशा से वर्त्तमान में अधिक खर्च करना मूर्खता है, लेकिन वर्त्तमान की कमाई को बचाकर भविष्य की कमाई से अपना खर्च चलाना बुद्धिमत्ता है।

४७ हम को जो शक्ति मिली है, उस को किस तरह काम में लाना चाहिये, यह हमारी इच्छा पर निर्भर है। हमारे सामने शुभ और अशुभ दो मार्ग खुले हैं, इन में से एक मार्ग स्वर्ग और एक नरक में पहुँचाने वाला है, जो मार्ग आत्मा के लिए सुखदायी हो उसे ग्रहण करना चाहिए।

४८ ऐ बुद्धिमान् ! जो कुछ कार्य करना है, उसे आज ही कर ले, कल न जाने क्या होगा, इसे कौन जानता ? हे चतुर ! आने वाले कल पर भरोसा न कर, करने योग्य कार्यों को आज और अभी कर ले, बीच में रात पड़ी है, कौन जाने क्या होगा ? ।

४९ देवता सत्पुरुष और पिता, ये प्रकृति से ही सन्तुष्ट होते हैं, परन्तु बन्धु लोग खान-पान से और पण्डित लोग प्रिय वचन से सन्तुष्ट होते हैं।

५० अहो! महान् पुरुषों का विचित्र चारित्र है, वे लक्ष्मी को तृण समान समझते हैं, यदि वह मिल जाती है, तो उस के भार से नम्र हो जाते हैं।

५१ जिस मनुष्य को किसी पर स्नेह होता है, उसी को भय होता है; क्योंकि स्नेह ही दुःख का भाजन है-स्नेह ही सब दुःख

का कारण है। इसलिए उसे छोड़कर सुखी होना चाहिए।

५२ जो आने वाली विपत्ति का पहिले से उपाय कर लेता है तथा जिस की बुद्धि में विपत्ति आजाने पर तत्काल उपाय सूझ जाता है, ये दोनों सदा सुखी रहते हैं। और जो भाग्य के भरोसे पर रहकर उपाय नहीं करता, वह अवश्य दुःख भोगता है।

५३ यदि राजा धर्मात्मा हो तो प्रजा भी धर्मिष्ठ होती है, यदि पापी हो तो पापी, और सम हो तो सम होती है। अर्थात् सब प्रजा राजा के अनुसार चलती है, जैसा राजा होता है वैसी प्रजा भी होती है।

५४ धर्महीन मनुष्य जीता हुआ भी मृतक के समान है, और धर्मयुक्त मरा भी चिरंजीवी ही है, इस में कुछ सन्देह नहीं।

५५ विषय में आसक्त मन बन्ध का हेतु है, और विषय वासना से रहित मुक्ति का कारण है। क्योंकि मनुष्यों के बन्ध और मोक्ष का कारण केवल मन ही है।

५६ दुर्जन दूसरे धर्मात्मा के यश का विस्तार देखकर ईर्षारूपी अग्नि से जलते रहते हैं, क्योंकि वे उस की समानता नहीं कर सकते, इसलिए उस की निन्दा करके अपनी ईर्षारूपी अग्नि को शान्त करना चाहते हैं। बुद्धिमानों को चाहिए कि उस विचारे निन्दक की ओर ध्यान न दें।

५७ बुद्धिमानों को चाहिये कि सदा अन्न धनादि का दान किया करें, लेकिन अधिक संचय न करें, क्योंकि दान करने के कारण ही राजा विक्रमादित्य कर्ण और बलि का नाम आज तक संसार में प्रसिद्ध है। मधुमक्खियाँ बहुत दिनों तक कठिन परिश्रम करके शहद इकट्ठा करती हैं। उसे वे न खुद भोगती हैं और न दूसरे को देती हैं; परन्तु जब उन का जमा किया हुआ मधु लोग ले लेते हैं, तब वे दोनो हाथ मलती हैं, अर्थात् हाय हाय करती और पछताती हैं।

५८ जब आत्मज्ञान हो जाता है, तब इस शरीर का अभिमान नहीं रहता। शरीर का अभिमान नष्ट होने पर जहां २ मन जाता है, वहां २ ही समाधि है, अर्थात् शरीर का ममत्व न रहने से शरीर से सम्बन्ध रखने वाले पुत्र मित्र कलत्र आदि में राग नहीं रहता और शत्रुओं पर द्वेष नहीं होता। सब वस्तुओं में समदृष्टि हो जाती है। तथा समदृष्टि होने पर आत्मा में समाधि रहती है।

५९ मनचाहे सब तरह के सुख किसी को भी नहीं मिलते हैं; क्योंकि सब भाग्याधीन हैं। इस बात को विचार कर विद्वानों को संतोष करना चाहिए।

६० जिस तरह हजारों गायों भैंसों के बीच में से बछड़ा अपनी माँ के पास ही जाता है, उसी तरह जो कुछ कर्म किया जाता है, वह अपने कर्त्ता के ही साथ साथ चला जाता है।

६१ जो कोई काम स्थिरता से नहीं करता, वह न बन में सुख पाता है और न जनसमूह में। बन में अकेले रहने से और मनुष्यों में उन के संग से उस की आत्मा जलती रहती है।

६२ जैसे कुए आदि खोदने वाले को पाताल का जल मिलता है। वैसे ही गुरु की सेवा करने वाले को गुरु की विद्या मिलती है।

६३ इस पृथ्वी पर " अन्न जल और मिष्ट वचन " ये तीन रत्न हैं; किन्तु मूर्ख लोग पत्थर के टुकड़ों को रत्न समझते हैं।

६४ यह जीव जो कुछ बुरे काम या अपराध करता है, उसके अपराध रूपी वृक्ष में " दरिद्रता रोग दुःख और बन्धन " ये चार फल लगते हैं। अर्थात् निर्धनता बीमारी, क्लेश और बन्धन— ये सब जीव के बुरे कामों के फल हैं। जो आम का बीज बोता है, वह आम के फल पाता है और जो बंबूल बोता है, वह काँटे पाता है।

६५ बीती हुई बात का शोक न करना चाहिए, भावी की चिन्ता न करनी चाहिए, बुद्धिमान् लोग वर्त्तमान कालको लक्ष्य में रखकर प्रवृत्ति करते हैं; जिससे उन का भविष्य भी उज्ज्वल हो जाता है।

६६ धन का नाश होने पर धन फिर मिल सकता है। मित्र का नाश होने से दूसरा मित्र मिल सकता है। स्त्री की मृत्यु होने पर लोग दूसरा व्याह भी कर लेते हैं। पृथ्वी अपने अधिकार से

निकल जाने पर वह फिर भी अधिकार में आ सकती है। किन्तु शरीर का एक बार नाश होने पर फिर वह नहीं मिल सकता।

६७ एक तिनका, मेह की एक बूंद को भी रोकने में समर्थ नहीं होता; किन्तु तिनकों का समूह, मेह की मूसलधाराओं को भी नीचा दिखा देता है; इसी तरह एक आदमी कुछ नहीं कर सकता किन्तु बहुत से आदमियों का समूह प्रबल शत्रु के भी दांत खट्टे कर देता है।

६८ जल में तेल स्वभाव से अपने आप फैल जाता है। दुष्ट मनुष्यों में गई हुई गुप्त बात अपने आप फैल जाती है। सुपात्र को दिया हुआ दान स्वयं वृद्धि को प्राप्त होता है। और बुद्धिमान् पुरुष में शास्त्र का ज्ञान अपने आप बढ़ता चला जाता है।

६९ वैराग्य बढ़ाने वाली धर्म सम्बन्धी कथा सुनते समय, श्मशान में जाते समय, रोगियों की रोगावस्था में जो बुद्धि उत्पन्न होती है, अगर वही बुद्धि हमेशा वैसी बनी रहती तो किसे इस संसार से छुटकारा न मिल जाता।

७० बुरा काम करके जो मनुष्य पछताता है, और उस समय जो उसकी निर्मल बुद्धि होती है, यदि वही बुद्धि पहले से ही होती, तो किस की सुख संपत्ति नहीं बढ़ती?।

७१ दान, तप, शूरता, बुद्धिमानी, सुशीलता, और नीति में किसी को अचंभा नहीं करना चाहिये; क्योंकि इस पृथ्वी पर अनेक

रत्न मौजूद हैं।

७२ जो जिस के हृदय में बसा रहता है, यदि वह दूर भी हो, तो दूर नहीं है, किन्तु जो जिसके हृदय में नहीं है, यदि वह पास भी हो तो भी दूर ही है।

७३ यदि तुम चाहते हो कि अमुक मनुष्य तुम से प्रिय वचन बोले, तो तुम्हें चाहिए कि तुम स्वयं उससे प्रिय वचन बोलो; क्योंकि शिकारी हिरन को वश में करने के लिए मीठे स्वर से गाना गाता है, तब हिरन प्रेम के मारे उसके पास स्वयं चला आता है।

७४ राजा अग्नि गुरु और स्त्री, —ये चार ऐसे हैं कि यदि इनके बिल्कुल पास ही रहो तो विनाश कर देते हैं और यदि बहुत दूर रहो तो कुछ फल नहीं देते; इसलिए उपरोक्त इन चारों को मध्यम अवस्था से सेवन करना चाहिये।

७५ अग्नि, जल, स्त्री, मूर्ख, सर्प, और राजकुल, इन को सदा सावधानी से सेवन करना चाहिये क्योंकि ये चारों ही तत्काल प्राण लेने वाले हैं।

७६ वही जिन्दा है जो गुणवान् है, वही जिन्दा है जो धर्मात्मा है। गुण हीन और धर्म हीन मनुष्य का जीना व्यर्थ है।

७७ यदि एक ही काम से सम्पूर्ण जगत् को अपने वश करना चाहते हो, तो पहले पांच ज्ञानेन्द्रिय (आंख कान नाक जीभ

और स्पर्शन अर्थात् चमड़ा) पांच कर्मेन्द्रिय (मुँह हाथ पाँव लिंग और गुदा) तथा पांच ज्ञानेन्द्रियों के पांच विषय (रूप रस गन्ध स्पर्श और शब्द) इन पन्द्रह से मन को रोको।

७८ जो मनुष्य मौके के अनुसार बात निकालता है, अपने अधिकार के अनुकूल प्रिय बचन बोलता है, और शक्ति के अनुसार कोप करता है, वह पण्डित है।

७९ एक ही वस्तु अधिकारी के भेद से अनेक प्रकार की नज़र आती है। जैसे श्मशान में पड़ी हुई वेश्या को योगी लोग अत्यन्त बुरी और निन्दा के योग्य मुर्दा समझते हैं, तथा कामी लोग काम भोग के योग्य समझते हैं, और कुत्ता मांस समझता है।

८० बुद्धिमान् को चाहिये कि सिद्ध औषधि, धर्म (ईश्वर-भक्ति दान आदि) घर का दोष, मैथुन, बुरे अन्न का भोजन, और अपने अपमान की बात किसी से न कहे।

८१ धर्म, धन, धान्य, गुरु का वचन और औषधि, इन का ग्रहण यथार्थ रीति से करना चाहिए। यदि इन का ग्रहण योग्य रीति से न करे तो बहुत नुकसान उठाना पड़ता है।

८२ हे मानव! दुर्जनों की संगति का त्याग कर और सज्जनों की सङ्गति कर, दिन रात पुण्य कर, और ईश्वर का नित्य भजन कर; क्योंकि यह संसार अनित्य है।

८३ जिस का मन, दुःखी जीवों को देख कर दया से पिघल

जाता है, उसे असली ज्ञानवान् समझना चाहिए, उस को मोक्ष अति निकट है। जटा बढ़ाना और शरीर पर भभूत लगाना आदि आडम्बर दिखाने से उसे क्या लाभ?

८४ जो गुरु शिष्य को एक अक्षर भी सिखाता है, उस से उऋण होने के लिए पृथ्वी पर ऐसा कोई धन नहीं है, जिसे देकर शिष्य उऋण हो सके।

८५ दुष्ट मनुष्य और कांटे से बचने के दो ही उपाय हैं— जूते से उनका मुँह तोड़ना, अथवा दूर ही से बचकर चलना।

८६ जो गृहस्थ मैले कुचैले कपड़े पहिनता है, दांत साफ नहीं करता है, बहुत भोजन करने वाला है, कठोर वचन बोलता है, सूर्य के उदय होने या अस्त होने के समय सोता है, उसे लक्ष्मी छोड़ देती है, चाहे वह विष्णु क्यों न हो।

८७ संसार में कोई किसी का बन्धु नहीं है, एक धन ही सब का बन्धु है; क्योंकि मित्र स्त्री सेवक और भाई बन्धु धन हीन पुरुष को छोड़ देते हैं, किन्तु वही धन हीन जब धनी हो जाता है, तो सब के सब अनेक प्रकार का नाता जोड़कर उस के साथ सम्बन्ध कर लेते हैं।

८८ अन्याय से पैदा किया हुआ धन दस बरस तक ठहरता है; ग्यारहवाँ वर्ष लगते ही मूल-पूँजी सहित नष्ट हो जाता है।

८९ बुरी वस्तु भी योग्य पुरुष को पाकर अच्छी बन जाती है।

और उत्तम वस्तु भी नीच को पाकर खराब हो जाती है; जैसे अमृत पीने से राहु की मृत्यु हुई और विष पीने से शंकर के कण्ठ की शोभा बढ़ गई ।

९० वही उत्तम भोजन है, जो साधु महात्माओं को दान देकर बचा है। वही मित्रता है, जो दूसरे मनुष्य से की जाती है । वही बुद्धिमानी है, जिस में पाप नहीं है । वही धर्म है, जो विना छल कपट के किया जाता है ।

९१ मणि बेसमझ लोगों के पाँव के आगे लोटती है और काच सिर पर भी रक्खा जाता है; लेकिन बेचने खरीदने के समय जौहरी के सामने मणि मणि ही रहती है, और काच काच ही रहता है ।

९२ शास्त्र अनन्त हैं और विद्या बहुत हैं; लेकिन समय थोड़ा है और विघ्न बहुत हैं; इसलिए मनुष्यों को सारमात्र का ग्रहण करना चाहिये; जैसे हंस जल में से दूध को ले लेता है ।

९३ दूर से आये हुए, रास्ते से थके हुए और विना प्रयोजन घर पर आये हुए का विना सत्कार किये ही जो मनुष्य भोजन करता है, वह निश्चय ही नीच गिना जाता है ।

९४ जो अनेक सूत्रों और अनेक शास्त्रों को पढ़कर भी आत्मा को नहीं पहिचानते , वे कलछा—चमचा के समान हैं, जो रसों में फिरता है; किन्तु उन का स्वाद नहीं जानता ।

९५ संसार रूपी समुद्र में साधुरूपी नौका धन्य है, जिस की उल्टी ही रीति है। उस के नीचे रहने वाले तिरते हैं और ऊपर रहने वाले नीचे गिरते हैं; अर्थात् साधु महात्माओं से नम्र रहने वाले संसार से पार होते हैं और नम्र न रहने वाले को धर्म के स्वरूप का ज्ञान न होने से वे नरक में जाते हैं।

९६ अमृत का घर औषधियों का स्वामी अमृत ही के शरीर वाला और पूर्ण शोभा वाला चन्द्रमा सूर्यमण्डल में जाकर तेजहीन हो जाता है; इस से मालूम होता है— पराये घर में जाने से कौन नीचा नहीं होता।

९७ भौंरा जब कमलिनी के फूलों के बीच में रहता है, तब उन फूलों के रस के मद से उन्हीं में अलसाया हुआ पड़ा रहता है। किन्तु जब भाग्यवश परदेश में चला जाता है, तब कमलिनी के फूलों के न होने से कुटज के फूलों को ही बहुत कुछ समझ लेता है।

९८ बन्धन तो कई तरह के होते हैं; किन्तु प्रेम की रस्सी का बन्धन कुछ और ही होता है। भौंरा लकड़ी को भी आसानी से काट सकता है; परन्तु वह कमल के कोश में पड़ा हुआ शक्ति होने पर भी कुछ नहीं करता।

९९ काटा जाने पर भी चन्दन का वृक्ष अपनी सुगन्ध नहीं छोड़ देता, वृद्ध हुआ भी गजेन्द्र अपनी क्रीड़ा नहीं छोड़ देता, कोल्हू में पेरे जाने पर भी ऊख अपनी मिठास नहीं छोड़ता; इसी

भांति उत्तम कुल का दरिद्र मनुष्य अपनी कुलीनता सुशीलता और उत्तम आचरण आदि सद्गुणों को नहीं छोड़ता।

१०० जो मूर्ख मोह के वश यह समझता है कि अमुक स्त्री मुझे प्यार करती है, वह उस के अधीन होकर क्रीड़ा (खेल) के पक्षी के समान नाचा करता है।

१०१ धन पाकर किसे घमण्ड न हुआ? कौन विषयी पुरुष संकट से दूर रहा? इस संसार में स्त्रियों ने किस का मन खण्डित नहीं किया?, राजा का प्यारा कौन हुआ?, काल के वश कौन न हुआ?, किस मांगने वाले ने बड़ाई पाई?, दुर्जन के हाथ में पड़कर किस ने संसार का मार्ग सुख से पार किया।

१०२ सोने के हिरन का होना किसी ने न देखा है और न सुना है, तो भी रामचन्द्रजी सरीखे ज्ञानवान् का मन सोने के हिरन पर ललचा गया, इससे मालूम होता है कि विनाशकाल आने पर सब की बुद्धि उल्टी हो जाती है।

१०३ प्राणी की बड़ाई उस के गुणों से होती है, ऊंचे आसन पर बैठने से नहीं। कौआ क्या महल के शिखर पर बैठने से गरुड़ के समान हो जाता है?।

१०४ बड़ी भारी सम्पत्ति वाले का आदर सब जगह नहीं होता, परन्तु गुणों का आदर सब जगह होता है। जैसे लोग पूर्णमासी के पूर्ण चन्द्रमा का उतना सन्मान नहीं करते, जितना कि कलंक रहित दोज के चन्द्रमा का करते हैं।

१०५ मनुष्य गुणवान् न भी हो, लेकिन दूसरे लोग उसके गुण की प्रशंसा करें, तो वह मनुष्य गुणवान् कहा जाता है। यदि इन्द्र अपने मुख से अपनी प्रशंसा करे तो वह भी लघु समझा जाता है। तात्पर्य यह है कि लोग जिस की प्रशंसा करें वही सच्चा गुणवान् है।

१०६ विचारवान् मनुष्य को पाकर गुण बड़ी भारी शोभा पाते हैं। जैसे रत्न को सोने में जड़ देने पर रत्न की शोभा स्वयं बढ़ जाती है।

१०७ जो मनुष्य अकेला है, जिस को किसी का सहारा नहीं है। वैसा मनुष्य कितना ही चतुर क्यों न हो तो भी वह दुःख पाता है। क्योंकि बहुमूल्य मणि को भी सोने का सहारा लेना पड़ता है।

१०८ जो धन अत्यन्त क्लेश से, अपने धर्म को छोड़ने से या शत्रुओं की खुशामद करने से मिले, ऐसे धन का त्याग करना ही ठीक है।

उपदेशमणि— माला

[५]

(१) तिनका सबसे छोटा होता है, तिनके से रुई हलकी होती है, रुई से भी हलका मांगने वाला है, जिसे हवा भी उड़ा कर नहीं

ले जाती; क्योंकि वह समझती है, कि यह भिक्षुक मुझ से कुछ मांग न बैठे।

२ इज्जत खोकर जीने की अपेक्षा मरना अच्छा है; क्योंकि मरने के समय क्षण भर का दुःख होता है; किन्तु इज्जत जाने का कष्ट हमेशा मन में खटकता रहता है।

३ मीठे वचन बोलने से सब प्राणी प्रसन्न होते हैं; इसलिए ऐसे वचन बोलना चाहिए, जिससे सब को सुख हो; क्योंकि संसार में प्रिय और मीठे वचनों की कमी नहीं, फिर हमें क्यों वचन में निर्धनता दिखानी चाहिए।

४ मनुष्यों के बाल सफ़ेद हो जाते हैं, दांत गिर जाते हैं, शरीर नम जाता है, गुलाबी तथा लाल शरीर फीका और शुष्क हो जाता है, नेत्र ज्योतिहीन हो जाते हैं, हाथ पैर काँपने लगते हैं, तो भी जीने की आशा और विषय की अभिलाषा पीछा नहीं छोड़ती। यह सब दुष्कर्म की महिमा है।

५ विषय-अभिलाषा, उसके साधन जुटाने से पूर्ण नहीं होती, न हुई और न होगी भी. केवल विषय भोग के साधनों का त्याग करने से, तप संयम का पालन करने से पूर्ण शान्ति मिल सकती है। जैसे घी डालने से अग्नि शान्त नहीं होती, वैसे ही विषय का सेवन करने से विषय-अभिलाषा तृप्त नहीं होती।

६ जैसे शराब के नशे में चूर हुआ मनुष्य, अपनी स्त्री को

माता और माता को स्त्री कहता है, वैसे ही संसार के प्राणी मोह के नशे में मूर्छित हुए सुख दुःख के बाह्य-निमित्त कारणों को सुख दुःख के देने वाले मान लेते हैं। यह सब अज्ञान की महिमा है।

७ प्राणियों को जीवित रहने से, धन स्त्री और खाने पीने से न कभी सन्तोष हुआ और न होगा, अर्थात् प्राणी उक्त वासनाओं से तृप्त न हुए ही इस असार संसार से कूच कर जाते हैं और करते रहेंगे।

८ संसार के पदार्थ—धन कुटुम्ब महल मकान और ऐश आराम ये सब नष्ट हो जाते हैं; किन्तु पात्र को दिया गया दान, प्राणी-मात्र पर हृदय से दिखाई हुई दया क्षमा तथा संयम आदि धर्म का पालन कभी नष्ट नहीं होता।

९ संसार में आसक्त (लवलीन) हुआ मनुष्य त्यागने योग्य पदार्थ का सेवन करता है, और ग्रहण करने योग्य पदार्थ को छोड़ देता है। अहो! संसार की विचित्र दशा है।

१० बहुत से लोग देवगति के जीवों को ईश्वर रूप मानते हैं; किन्तु उन्हें यह मालूम नहीं कि— ईश्वर कौन है? ईश्वर क्या वस्तु है? ईश्वर किसे कहना चाहिये? ईश्वर का क्या स्वरूप है? ईश्वर कहां है? इत्यादि इन बातों का ज्ञान होना परमावश्यक है। ईश्वर में स्पर्श रस गन्ध और वर्ण नहीं होता है, जो जीव कर्म का क्षय कर मोक्ष अवस्था को पालेता है, वही ईश्वर हो जाता है।

जिस जीव के कोई कर्म नहीं रहता है, मन वचन और शरीर नहीं होता है तथा जिसे कुछ भी करना बाकी नहीं रहा है, जिसे फिर संसार में आना नहीं रहा है, तथा जो राग द्वेष रहित है, वही ईश्वर है।

११ संसार के सब प्राणी केवल एक सेर अन्न और एक टुकड़े वस्त्र के लिए चिन्तामणि रत्न के समान इस अमूल्य समय को खो रहे हैं और आत्मा के हित की परवाह नहीं करते।

१२ तीन बातें यश को बढ़ाने वाली हैं— अपनी प्रशंसा न करना, दुर्जन की भी निन्दा न करना, तथा दुःखी जीवों का दुःख दूर करना।

१३ तीन बातें धर्म पर श्रद्धा कराने वाली हैं— अन्तःकरण में दया रहना, इन्द्रियों का वैराग्य से दमन करना और सत्य बोलना।

१४ तीन बातें जीव को कलियुग में सुख देनेवाली हैं— जीभ को वश में रखना, अधिक लोभ न करना, विना विचारे कोई काम न करना।

१५ तीन बातें जीव को सच्चा धर्म प्राप्त कराती हैं— सत्य बात को मानना और झूठी को छोड़ना, तत्वज्ञान का अभ्यास करना, वीतराग धर्म को पालने वाले परिग्रह रहित गुरु का उपदेश सुनना।

१६ संसार रूपी कूट वृक्ष के दो ही अमृत फल हैं— मीठे और प्यारे वचन तथा सत्पुरुषों की संगति।

१७ जो मनुष्य अनेक भवों (जन्मों) में दान देने, विद्या पढ़ने,

और तपस्या करने का अभ्यास करता है, वह बार बार मनुष्य जन्म पाता है तथा अन्त में कर्मों का क्षय कर मोक्ष पाता है।

१८ जो विद्या सिर्फ़ पुस्तकों में ही रहती है, अर्थात् कण्टस्थ नहीं की जाती, वह विद्या और वह धन जो पराये हाथ में रहता है; मौक़ा पड़ने पर किसी काम में नहीं आता।

१६ जिस ने केवल पुस्तक के सहारे विद्याभ्यास किया है, किन्तु गुरु के पास जाकर विद्या नहीं पढ़ी, वह सभा के बीच इस तरह शोभा नहीं पाता, जिस तरह व्यभिचारिणी गर्भवती होकर शोभा नहीं पाती।

२० जो भलाई करे, उस के साथ भलाई करना उचित है, जो युद्ध करे, उससे युद्ध करना तथा जो बुराई करे उस के साथ बुराई का आचरण करना नीति में उचित बतलाया है, तो भी धार्मिक पुरुष ऐसा वर्त्ताव नहीं करते, वे बैर करने वाले के साथ स्नेह और बुराई करने वाले के साथ भलाई ही करते हैं।

२१ जो दूर है, जिस का सेवन करना अति कठिन है और जो बहुत दूर पर रहने वाला है, वह सब तपस्या करने से सिद्ध हो सकता हैं; इसलिए तप बल के बराबर दूसरा कोई बल नहीं है।

२२ यदि लालच है, तो और अवगुणों से क्या प्रयोजन? अगर चुगली है तो और पाप कामों से क्या मतलब? यदि पूर्ण सत्य है, तो तपस्या से क्या प्रयोजन? यदि मन साफ़ है तो तीर्थ यात्रा करने

से क्या लाभ ? यदि भलमंसी है तो दूसरे गुणों से क्या मतलब ? यदि संसार में कीर्त्ति है तो गहनों का लादना फ़िजूल है, यदि उत्तम विद्या है तो धन चाहे हो या न हो, कोई चिन्ता की बात नहीं, यदि अपकीर्त्ति है तो मरने से क्या भय है।

२३ जिस का पिता रत्नों की खानि समुद्र है, जिस की बहिन लक्ष्मी है, ऐसे प्रतापी और बलवान् सहायको के होते भी शंख को भीख मांगनी पड़ती है, सच है विना दान दिये किसी को कुछ नहीं मिलता।

२४ जिस में किसी तरह का बल नहीं रहता वह झूठ मूंठ का त्यागी हो जाता है, जो निर्धन होता है वह ब्रह्मचारी बन जाता है, जो रोग से पीड़ित होता है वह देवताओं की भक्ति करने लगता है, जो स्त्री वृद्धा हो जाती है वह पतिव्रता बन बैठती है।

२५ अन्न जल तथा अभयदान बराबर दूसरा दान नहीं है, अष्टमी और चतुर्दशी के समान दूसरी तिथि नहीं है, नमोकार मन्त्र से बढ़कर कोई मन्त्र नहीं है, और माता से बढ़कर कोई देवता नहीं है।

२६ सांप के दांतों में विष रहता है, मक्खी के सिर में विष रहता है, बिच्छू की पूंछ(डंक)में ज़हर रहता है; किन्तु दुर्जन के तो सम्पूर्ण शरीर में ही ज़हर भरा रहता है।

२७ दान देने से, सैकड़ों व्रत उपवास करने से या तीर्थ-यात्रा करने से, स्त्री उतनी शुद्ध नहीं होती; जितनी कि अपने पति के चरणों

की सेवा करने से होती है ।

२८ हाथ कंकरण से शोभा नहीं पाता, किन्तु दान से शोभा पाता है। चन्दन से शरीर शुद्ध नहीं होता, लेकिन स्नान से ऊपर का शरीर शुद्ध होता है। और दया क्षमा संयम आदि से अन्तःकरण शुद्ध होता है। भोजन से तृप्ति नहीं होती, किन्तु सन्मान से होती है। तिलक छापा आदि भूषणों से मुक्ति नहीं होती, किन्तु सम्य ग्ज्ञान पूर्वक चारित्र का पालन करने से होती है ।

२९ नाई के घर पर बाल बनवाने वाला, पत्थर पर चन्दन आदि गन्ध का लेपन करने वाला, पानी में अपनी परछाईं को देखने वाला मनुष्य यदि इन्द्र हो तो भी लक्ष्मी उस को छोड़ देती है ।

३० कुंदरू का भक्षण करने से तत्काल बुद्धि नष्ट हो जाती है, वच का सेवन करने से शीघ्र ही बुद्धि बढ़ती है, स्त्री चटपट शक्ति हर लेतीहै और दूध तत्काल ही बल बढ़ाता है।

३१ जिन सज्जनों के मन में हमेशा ही दूसरे की भलाई करने की इच्छा रहती है, उन का सब दुःख नष्ट हो जाता है, और उन को पद पद पर सम्पत्ति मिलती है ।

३२ यदि घर में पतिव्रता स्त्री हो, घर में खूब धन हो, पुत्र गुणवान् हों, पुत्र के पुत्र उत्पन्न होगया हो तो स्वर्ग में ही, इससे ज्यादा और क्या सुख ?

३३ भोजन करना, नींद लेना, डरना, मैथुन करना, इन बातों

में पशु और मनुष्य समान हैं, केवल ज्ञान ही मनुष्यों में ज्यादा है; किन्तु जो मनुष्य ज्ञानहीन हैं वह पशु के समान हैं।

३४ यदि मद से अन्धे हुए गजराज ने मदान्धता के वश होकर कान रूपी हाथ से गजमद के अर्थी भौरों को दूर किया तो उस के गराड-स्थल की शोभा घटी। भौरे तो फिर खिले हुए कमलों में जाकर निवास कर लेते हैं। इस का तात्पर्य यह है कि दानी पुरुष की शोभा योग्य दान करते रहने से ही है, याचकों को तो कोई न कोई दाता मिल ही जाता है।

३५ राजा, वेश्या, यम, अग्नि, चोर, बालक, याचक, और, ग्रामकण्टक, अर्थात् जो ग्राम निवासियों को सताकर अपनी जीविका करता है, इन आठ व्यक्तियों को दूसरों के दुःखकी परवाह नहीं रहती।

३६ ईश्वर का स्मरण- चिन्तन करने से मन पवित्र होता है; मन की पवित्रता से ज्ञान का प्रकाश होता है। जहां ज्ञान का प्रकाश है, वहां अज्ञानान्धकार नहीं रह सकता। इसलिए अज्ञानरूपी अन्धकार को दूर करने के लिए उस तरण तारण सर्वज्ञ परमात्मा का सोते बैठते खाते चलते फिरते--हर समय स्मरण चिन्तन करो। जिस पवित्र मन में वह देवाधिदेव परमात्मा निवास करता है, वहाँ दुःख अज्ञान आदि का रहना कठिन है। जैसे चन्दन के वृक्ष से लिपटे हुए सर्प मोर के आने पर एक दम भाग जाते हैं।

३७ परमात्मा का ध्यान- चिन्तन ऐसे एकान्त स्थान में करना चाहिये, जहां किसी का आना जाना न हो। बहुत से लोग नदी तालाब और कुएँ के घाट पर सन्ध्योपासनादि करने लगते हैं। बहुत से लोग ऐसे मन्दिरों या स्थानों में— जहां पुरुष स्त्रियों का अक्सर आना जाना बना रहता है— बगुले का सा ध्यान लगाये रहते हैं यह ठीक नहीं। ऐसे स्थान में लोग यदि सच्चे दिल से ईश्वर का ध्यान करें तो भी उन्हें ढोंगी-पाखण्डी कहने लगते हैं।

३८ पान का पीक या तम्बाकू का पीक या खखार दीवारों पर या कोने में किवाड़ों के पीछे या मन चाहे जहां नहीं थूँक देना चाहिये, खास कर के दूसरे के घर में इस बात का पूरा ध्यान रखना चाहिये।

३९ अगर कहीं स्त्रियाँ बैठी हों या बात चीत कर रही हों, तो वहां चुपचाप चला जाना ठीक नहीं है। ऐसा कोई शब्द करके बढ़ो, जिससे कि उन्हें तुम्हारा आना पहले ही मालूम हो जावे।

४० जहां तक बन सके पुरुषों को स्त्रियों के साथ बातचीत नहीं करनी चाहिये। यदि किसी खास कारण से बातचीत करनी पड़े तो बात चीत करते समय अपनी दृष्टि नीची रखो, अगर आवश्यकता हो तो उन की ओर देखकर फिर नीची नज़र कर लो।

४१ जहां लोगों का ज्यादा घूमना फिरना हो, वहां पर मल, मूत्र थूँक, नाक का मल, कफ़ वगैरह घिनौनी चीजें डालना ठीक नहीं है। ऐसी चीज़ें एकान्त में जन्तु रहित स्थान में डालना चाहिये,

जहां मनुष्यों की दृष्टि नहीं पड़ती हो ।

४२ जो स्त्री आप को देकर लज्जा करे, उस के सामने ज्यादा फिरना, विना कारण बात चीत करना या उस की तरफ देखना ठीक नहीं।

४३ अगर मंजूर करने योग्य बात है और उसे आप का मन मान रहा है तो उसे विना किसी भय के मान लो, व्यर्थ ही जिद्द मत करो। हाँ उस के विषय में उचित ऊहापोह— तर्क वितर्क करने में कोई हानि नहीं ।

४४ प्राय: स्त्रियां विवाह आदि उत्सवों में या अपने नाते रिश्तेदारों को गाली वाले गीत गाया करती हैं, किन्तु यह कुरिवाज़ अपनी आत्मा और जाति का पतन करने वाला है; इसलिए बहिनों को चाहिए कि गाली वाले गीत किसी को न सुनावें । भद्दे गीत गाना निर्लज्जता का चिह्न है ।

४५ जिस किसी से जिस समय मिलने जुलने को कहो, उस से ठीक समय पर मिलो। यदि कोई जरूरी काम आ पड़े तो उस काम को भी छोड़ दो ! जिस से मिलने का वादा किया है, उस से थोड़ी देर ही मिलकर जरूरी काम के लिये आज्ञा माँग लो; किन्तु अपने वचन को मत खोओ ।

४६ उत्सव, मेले, बाज़ार या मनुष्यों की भीड़ में चलते समय यदि किसी को आप का धक्का लग जावे तो उस से उसी समय "मुआफ करना क्षमा कीजिये" इत्यादि वाक्य कहकर

उस के मन को प्रसन्न कर दो ।

४७ रात के समय जब कि लोग अपने घरों में सो रहे हों, उस समय बाज़ार में ज़ोर ज़ोर से बातें करते हुए निकलना या दूसरा कोई उन की नींद में हानि पहुँचाने वाला कार्य करना बिल्कुल अनुचित है ।

४८ यदि अपने से कोई अपराध बन जावे तो उसे निर्भयता पूर्वक स्वीकार कर लो । अपराध स्वीकार करना आत्मा को उन्नत बनाना है । जिसका अपराध तुम्हारे द्वारा हुआ हैं, उससे तुरन्त क्षमा मांग लो ।

४६ किसी की धरोहर (अमानत) रखी हुई वस्तु, बिना मालिक की मंज़ूरी के काम में न लाओ, न गिरवी रक्खो और न बेचो ।

५० रेल के डब्बे में बिना किसी विशेष कारण के लोगों के बैठने के स्थान पर टांगें फैलाकर या अपना सामान फैलाकर न बैठो और न लेटो । क्या यह ठीक है कि एक भाई तो खड़ा हो और तुम आराम से बैठने की जगह टांगें फैलाये रहो या अपना सामान रखे हुए आराम से बैठे रहो या लेटे रहो ? इसे असभ्यता कहते हैं ।

५१ यदि किसी मनुष्य को तुम्हारा पैर छू जावे तो उससे हाथ जोड़कर अपनी इस गलती के लिये क्षमा मांग लो ।

५२ रेल के डब्बे में अगर बैठने के लिए जगह खाली हो तो अपने आराम के लिये दूसरों को आने से मत रोको, लड़ाई झगड़ा मत

करो, उन को आने दो, बल्कि उनको बैठने के लिये बुला लो।

५३ जहां पर स्त्रियां हों, वहां आपस में हँसी मजाक भी नहीं करना चाहिये। यही बात स्त्रियों के लिये भी है, वे भी पुरुषों के सामने अपनी निर्लज्जता न दिखावें।

५४ चाहे कितना ही किसी पुरुष से प्रेम क्यों न हो; किन्तु उस की स्त्री के पास अकेले में पवित्र भाव लेकर भी मत जाओ।

५५ रेल, तारघर, डाकघर, नाटकघर, सीनेमा, सभा, पुस्तकालय कारखाने आदि के नोटिसों में लिखी हुई सूचनाओं का उल्लंघन कदापि मत करो।

५६ जिससे जिस बात के लिये जितने पैसे ठहरा लिये हों, उसे उतने ही दो। उस में से फूटी कौड़ी भी कम देने की इच्छा तक न करो।

५७ किसी की मिहनत का बदला दिये विना न रहो। यदि वह उस समय उस के बदले में लेने से इन्कार करे तो फिर कभी किसी समय किसी दूसरे बहाने से उसको मिहनत का मेहनताना चुका दो।

५८ नाई धोबी चमार मेहतर कुम्हार भाट आदि मनुष्यों की मजदूरी के दाम पूरे और प्रसन्नता पूर्वक दो। इन लोगों की प्रसन्नता में कीर्त्ति और नाराज़ी में अपकीर्त्ति होने में देर नहीं लगती।

५९ रेल में या ऐसी सवारी अथवा स्थानों में, जहां पैसे देकर जाने आने का नियम बना हो, वहां विना पैसे दिये अथवा बिना

टिकट या आज्ञा प्राप्त किये मत जाओ।

६० अपने पास जिस दर्जे का टिकट हो या जिस दर्जे के दाम दिये हों उससे ऊँचे दर्जे के स्थान में बैठने की कोशिश मत करो। विना किसी ज़रूरी कारण के या अधिकारी की विना आज्ञा पाये ऐसा करना, चोरी और धोखे की हद तक पहुँचाता है।

६१ जहां वेश्याएँ या व्यभिचारिणी स्त्रियां रहती हों, उन चकलों या मुहल्लों में मत घूमो फिरो। उस रास्ते से यदि जाने आने का काम पड़े तो दूसरे रास्ते से जाओ, चाहे चक्कर क्यों न पड़े।

६२ किसी के गुप्त काम या बात को यदि आप जानते हैं तो किसी प्रबल कारण से उत्पन्न हुए क्रोध के विना अथवा अविचार के कारण उसे प्रकट न करो।

६३ जो कुछ मुँह से निकालो, खूब आगा पीछा सोचकर निकालो। मुँह से कही हुई बात निष्फल न जावे, इस का पूरा खयाल रक्खो। यह तभी हो सकता है, जब तुम अपनी ज़बान के पक्के और सोच- विचार कर बात निकालने वाले बनो।

६४ यदि आप किसी की निःस्वार्थ सेवा थोड़ी बहुत भी तन से मन से या धन से कर सको तो कदापि न चूको।

६५ जहां कहीं किसी एक विषय पर बातचीत चल रही हो, उस में भिन्न विषय की बात नहीं छेड़ना चाहिये, और न बातचीत ही करनी चाहिये।

६६ यदि कोई व्याख्यान दे रहा हो और आपको उस के वक्तव्य के सम्बन्ध में कुछ पूछना हो तो उसी समय बीच में न बोल उठो। बल्कि उस के चुप हो जाने पर नम्रता पूर्वक उससे आज्ञा लेकर अवसर के अनुसार बातचीत करो।

६७ यदि सभा का सभापति चुना गया है तो जब कभी आपको बोलना पड़े, सभापति को सम्बोधन किये विना कुछ भी न बोलें, क्योंकि सभापति उस समय की बातों का उत्तरदाता है।

६८ विना किसी ज़रूरी कारण के किसी सभा या समाज में से उठकर मत चल दो, क्योंकि ऐसा करने से सभा में विघ्न होता है, वक्ता और श्रोताओं का ध्यान बट जाता है।

६९ किसी के मकान में घुसने के पहले अन्दर जाने की इजाज़त मांग लो। बाद में भीतर प्रवेश करो। अंधाधुंध घुसते चले जाना ठीक नहीं।

७० व्यभिचारियों से--- (वह पुरुष हो या स्त्री) आवश्यकता आ पड़ने पर भी बातचीत करना टाल दो। यदि अत्यन्त ही आवश्यकता आ पड़े तो जरूरी बात करके अलग हट जाओ।

७१ असभ्यों की संगति में नहीं रहना चाहिये, क्योंकि संसार परीक्षा की कसौटी है। वह संगति के कारण आप को भी खोटा कहेगा।

७२ अन्धे, लंगड़े, लूले, काने और इसी तरह के अंगहीन दीन मनुष्यों की नक़ल मत करो— उन्हें न चिड़ाओ। बल्कि उन

की तन और धन से सेवा करो ।

७३ सभा सोसाइटियों में बहुमत का ध्यान रखते हुए अपना मत बहुत सोच विचार के साथ प्रकट करो ।

७४ किसी की वस्तु खोजाने पर या गिर जाने पर यदि आप को मिल जावे तो आप उसके मालिक को लौटा दो । यदि मलिक का पता न चले तो सब को प्रकट कर दो और उसे अपने पास न रखो, बल्कि पुलिस में या सेवासमिति आदि ऐसी संस्था में दे दो, जो उसे वहां तक पहुँचा दे ।

७५ कई बहिनें और माताएँ बहुत ही महीन कपड़ा पहिनती हैं, जिस से उन का अंग उपांग साफ़ दिखाई पड़ता है, यह निर्लज्जता का सूचक है । घर के बाहर तो ऐसे कपड़े पहन कर कदापि नहीं निकलना चाहिये ।

७६ जिस पुरुष या स्त्री का बदनाम हो— चाल चलन, रहन सहन ठीक न हो, उसे घर में कामकाज के लिए नहीं रखना चाहिये, न उसका घर में प्रवेश ही होने देना चाहिये ।

७७ नीचों की संगति से बिलकुल दूर रहना चाहिये— क्योंकि लोग संगति के अनुसार आप को समझने लगेंगे । भले ही आप मदिरा का स्पर्श भी न करें, लेकिन कलाल की दूकान पर बैठने से या कलाल अथवा शराबी की संगति करने से लोगों का आप पर भ्रम हो जावेगा; इसलिए ऐसी संगति में बैठने से लांछन लगता हो, वहां भूलकर भी पैर मत रक्खो ।

७८ किसी के दुःख, बीमारी, आपत्ति में मृत्यु के समय बिना बुलाये ही चले जाओ— बुलाने का मार्ग मत देखो। शत्रुता भूलकर शत्रु के दुःख में शामिल हो जाओ।

७९ बाज़ार से लेकर मिठाई तथा चटपटी चीजें बाज़ार में मत खाओ।

८० यदि दूसरे के पढ़ने के लिए लिख रहे हो तो लिखते समय उस की सुविधाओं का ध्यान रक्खो, अक्षर साफ़ साफ़ लिखो, ताकि उसे पढ़ने में कठिनाई न हो; बहुत जल्दी से बुरे बुरे अक्षर लिखना प्रायः लोग अपनी पंडिताई समझते हैं; किन्तु यह भूल है। अक्षर साफ़ सुथरे और सुवाच्य होने चाहियें, ताकि पढ़ने वाले का मन पढ़ने को चाहे।

८१ सभा, समाज में अपनी इज्जत, पद और उम्र के अनुसार पहिले ही से अपना स्थान देखकर बैठो।

८२ अपनी भार्या को मत मारो, आप शुरू से ही ऐसा बर्ताव करो, जिस से वह नौबत ही न आवे, तथा स्त्रियों को भी चाहिये कि वे अपने पति की आज्ञानुसार चलकर उसके मन को हमेशा प्रसन्न रखें; क्योंकि जिस घर में भार्या अपने पति को प्रसन्न रखती हैं— और पति अपनी पत्नी को प्रसन्न रखता है, उस घर में सदा सुख-शांति का निवास रहता है।

८३ किसी बात का हठ मत करो, घर में भाई—बन्धुओं में, समाज में, जाति में, कलह उत्पन्न करने वाली बात को न उठाओ। किसी की निन्दा न करो। समाज या देश में अशान्ति उत्पन्न

करने वाली गुप्त बात को समाचार पत्रों में लेख द्वारा या नोटिस आदि द्वारा प्रकट न करो।

८४ जिस काम में मनुष्य दूसरे का अपराध देखता है, उसमें थोड़ा बहुत खुद का भी होता है। इसलिए अपने उस अपराध के लिये खुद को दण्ड दो और उस दोष को हटा दो, दूसरा मनुष्य आप ही आप सुधर जावेगा।

८५ विद्यार्थियो! पाठशाला में पढ़ने लिखने के सिवाय, बात चीत, खेलकूद झगड़ा आदि दूसरा काम मत करो। यह ध्यान रखो कि पढ़ने के समय पढ़ो और खेलने के समय खेलो।

८६ विद्यार्थियों को चाहिये कि अपने सहपाठियों से लड़ाई न करें, बल्कि प्रेम के साथ रहें। सब के साथ भाई बहन का सा बर्त्ताव करें

हिलि मिलि के निज गृह बसें, पंछिहु निपट अजान।
कछु लज्जा है या नहीं, बालक चतुर सुजान॥

८७ लड़को! अपने देश की सभ्यता तुम्हें लड़कियों के साथ खेलने के लिये मना करती है; इसलिये लड़कियों में मत खेलो।

८८ लड़को! विद्वान् पुरुषों की संगति में ही अपना समय बिताओ। विद्याप्रेमी पुरुषों के पास ही बैठो, उन की बातें ध्यान से सुनो और तदनुसार आचरण करो। यदि मूर्ख समाज तुम्हें वहाँ से हटाने के लिए अनेक प्रकार की कोशिशें करें तो भी तुम अपने सुमार्ग पर निर्भयता पूर्वक खड़े रहो।

८९ लड़को तथा नवयुवको ! गंजेड़ी, भंगेड़ी, मदकची, अफीमची, शराबी, तम्बाकू सेवन करने वाले और चाय वगैर: पीनेवाले व्यक्तियों को हरगिज़ अच्छा मत समझो— उन की संगति भूलकर भी मत करो।

९० जिससे एक बार मित्रता कर ली हो, उससे फिर जहां तक हो सके बैर मत करो। यदि किसी कारण वश मनोमालिन्य हो भी जावे तो मन में ही रखो और दूसरे लोगों पर प्रकट मत होने दो।

९१ किसी न किसी सभा समिति समाज अथवा संस्था के समासद अवश्य ही बन जाओ, और उस में दिलचस्पी से भाग लो।

९२ अपने घर पर आये हुए मनुष्य से ज़रूर बोलो, यदि बोलने, के लिये कोई बात न हो तो कुशल समाचार तथा उसके आने का कारण ही पूछो। कहीं ऐसा न हो कि आप उससे बोले ही नहीं और वह बुरा मानकर चला जाय।

९३ यदि कोई अपने घर पर आया हो तो आपको उसके पास उपस्थित रहना चाहिए। यदि आपको उसी समय कोई आवश्यकीय कार्य हो तो उसके लिए आगन्तुक महाशय से आज्ञा मांग लो।

९४ किसी दूसरे की पुस्तक को यदि पढ़ने के लिये मांगकर लाये हो तो उस पर अपना नाम या और कुछ भी न लिखो, यहां तक कि पुस्तक के मालिक का नाम भी उस की आज्ञा के विना अपने हाथ से न लिखो। याद रखो कि पुस्तक मैली न हो जावे, पृष्ठों के कोने न मुड़ने पावें। कोई अनजान बालक किसी पृष्ठ को या

चित्र को न फाड़ डाले। यदि आप को इन बातों की परवाह न हो तो आप दूसरे लोगों से पुस्तकें मत मांगिये— नहीं तो वे इन्कार कर देंगे। या आप को कुछ खरी खोटी कह देंगे तो आप को बुरा लगेगा।

६५ यदि मांगी हुई पुस्तक खो जावे या खराब हो जावे तो उस के मालिक को उसके बदले में नई पुस्तक मँगाकर दो। क्योंकि उसने आप को पढ़ने के लिये पुस्तक दी थी न कि खोने या खराब करने के लिये।

६६ पुस्तक यदि पढ़ने के लिये मांगकर लाये हो तो उसे शीघ्र ही लौटा दो। देनेवाले के मांगने की राह मत देखो। यदि पढ़ने के लिये फुरसत नहीं है तो पुस्तकों को व्यर्थ ही ला लाकर अपने घर में ढेर मत करो। अवकाश न हो तो विना पढ़े ही लौटा दो, फिर जब कभी फुरसत हो तब मांग लाना।

६७ किसी के साथ साथ चलते समय दूसरे के चलने की सुविधा का ध्यान रखो। कंधे से कंधा भिड़ाकर चलना तथा अपनी चाल को उस की तरफ दबाकर उस को एक तरफ धकेल देना या रास्ते से हटा देना अनुचित नहीं है; यह सब आदत सी पड़ जाती है, अतएव इस आदत को छोड़ दो।

६८ ज़बानी बातों का उत्तर ज़बान ही से दो; और लिखित बातों का उत्तर लिखकर ही दो। लिखे हुए का ज़बान से और ज़बानी का लिखकर विना किसी कारण विशेष के जवाब मत दो। खासकर वाद-विवाद के समय इस बात का बहुत ही ध्यान रखना चाहिये।

९९ यदि किसी ने आपसे कोई बात गुप्त रखने के लिये कहा हो तो उसे गुप्त ही रखो और भूलकर भी किसी पर प्रकट न करो।

१०० यदि आपने किसी की कहीं पर निन्दा सुनी हो तो उस निन्दा जनक बात को उसे एकान्त में कहो— लोगों के सामने कदापि भूलकर भी मत कहो।

१०१ जब किसी का नाम उच्चारण करो, तब उसके पहले श्रीयुत, श्रीमान, पंडित, सेठजी, महाशय, बाबू, महानुभाव, मित्र, बन्धु, महोदय, आदि यथायोग्य शब्द लगाना चाहिये और नाम के अन्त में 'जी' शब्द का प्रयोग करना चाहिये।

१०२ अशुभ, अभद्र, और अधम, विचारों को मन से निकाल फेंकिये। ये ही मनुष्य को असभ्य और अधम बनाते हैं।

१०३ सर्वदा मन में शुभ विचार, बाणी में शुभ उच्चार और आत्मा में शुभ आचार को धारण करो। ये तीन बातें ही केवल ऐसी हैं, जो मनुष्य को सभ्य और योग्य बनाती हैं।

१०४ रेलवे, पोस्टआफिस, जगात आदि के नियमों से विरुद्ध काम करना चोरी समझी जाती है; इसलिए आप को रेलवे आदि के नियम विरुद्ध कोई काम नहीं करना चाहिये।

१०५ मुसाफिरखानों, सरायों, धर्मशालाओं तथा ऐसे ही दूसरे सार्वजनिक स्थानों को किसी तरह भी मैला और खराब मत करो। यदि कोई दूसरा करता हो तो उसे नम्रता पूर्वक समझाकर रोक दो।

१०६ जैसे नदियां दूसरों के हितके लिये ही बहती हैं, गायें अपने दूध से दूसरों का पोषण करती हैं, वृक्ष अपने फलों से दूसरों के ही प्राणों की रक्षा करते हैं; वैसे ही सज्जनों का तन मन और धन परोपकार के लिए ही होता है।

१०७ हे परम पिता परमात्मा ! हम आंखों से साधुमहात्माओं के दर्शन करें, कानों से भगवद्भजन और दूसरों की प्रशंसा सुनें, मुख से हित और प्रियकर वचन बोलें, शरीर से दीन दुखियों तथा साधुमहात्माओं की सेवा करें।

१०८ हे निरंजन देव ! हमारी ऐसी बुद्धि हो, जिससे संसार के प्राणीमात्र के साथ मैत्रीभाव रहे, विद्वानों और गुणवानों को देखते ही हर्ष हो, दुःखी जीवों पर करुणा हो और शत्रु पर प्रेम न हो सके तो द्वेषभी न हो, बल्कि मध्यस्थभाव रहे।

॥ इति शुभम् ॥

कठिन शब्दों के अर्थ.

शब्द	अर्थ
अग्निकाण्ड	अग्नि की घटना.
अघाया	अफरा.
अतिथि	पाहुना मेहमान.
अधिकार	हक़, दर्जा.
अनिष्ट	अनचाहा, अवांछित, बुरा.
अनुकूल	अनुसार, माफ़िक, मुताबिक.
अनुयायी	अनुचर, साथी.
अनुरक्त	मग्न, आसक्त.
अनुरूप	अनुसार, अनुकूल.
अनुसरण	देखादेखी, अनुकरण.
अलङ्कृत	भूषित, सजा हुआ.
अवलम्बित	आश्रित, सहारे पर.
असह्ययातना	नहीं सहे जा सकने योग्य कष्ट.
असीम	बेहद, हद से बाहर.
आकर्षित	उन्मुख, खिंचा हुआ.
आदरणीय	सन्माननीय.
आक्षेप	इलज़ाम, अपवाद, दोष लगाना.
आमाशय	पेट की वह थैली जहां भोजन इकट्ठा होता और पचता है।
आर्जव	निष्कपटता.
आवेश	उमड़ना.
आश्रित	सहारा, अवलम्बन
आश्वासन	तसल्ली, दिलासा, सान्त्वना.
उक्त	कहा हुआ.
उत्तेजना	तरक्की.
उद्वेग	घबराहट, खिन्नता.
उन्नत	ऊँचा, उत्कृष्ट.
उपयोगी	लाभप्रद.
उपस्थित	हाज़िर, मौजूद, वर्तमान.
उपहास	हँसी.
उपेक्षा	विरक्ति, उदासी.

शब्द	अर्थ	शब्द	अर्थ
एकाग्रता	ध्यान, अचंचलता.	चरित	चालचलन, हाल.
एकान्त	निर्जन, वीरान.	चापलूस	खुशामदी, लल्लो पत्तो करने वाला.
ओर	तरफ़.	चिन्तातुर	चिन्तित, चिन्ता-ग्रस्त, व्याकुल.
कटिबद्ध	तैयार, उद्यत.	चिरस्थायी	टिकाऊ, ठहरने वाला.
कर्त्तव्य परायणता	कार्यतत्परता.	जड़ता	शून्यता.
कलत्र	स्त्री, पत्नी.	जन	मनुष्य.
कलाचार्य	विद्यागुरु.	जननी	माता, जन्म देने वाली.
कारावास	कैदखाना.	जलाशय	तालाब आदि.
कुक्कुट	मुर्गा.	जीवितमृतक	मुर्दार.
कुनबा	कुटुम्ब, परिवार.	टेसुवा	ढाक के फूल.
कुल	बंश, घराना.	ताड़ जाना	समझ लेना.
कुलाङ्गना	कुलीन स्त्री.	तीती	कड़वी
कृतघ्नी	उपकार न मानने वाला.	तीव्र	तेज
कृतज्ञ	उपकार मानने वाला.	तेजस्विता	तेजपूर्णता, प्रभा-वशालिता.
कृतज्ञता	उपकार मानना.	दत्तचित्त	लवलीन, दत्ता-वधान.
क्षणिक	विनाशी.	दम्भी	कपटी, पाखण्डी.
गर्द	धूलि.	दारुण	भयानक, घोर.
गृहिणी	घरवाली, स्त्री.	दुर्जन	दुष्ट, खल, अधम.
घिनौनी	घृणा जनक.		
घुङ्गची	गुञ्जा.		
चरअचर	त्रस स्थावर, चेतन अचेतन.		

शब्द	अर्थ
दुरुपयोग	अनुचित इस्तेमाल.
दुश्चरित्र	दुराचारी, दुराचार.
दूरदर्शी	विचारक, आगे की सोचने वाला.
द्वारपाल	दरबान, द्वाररक्षक.
धीरता	धीरज, घबरा न जाना.
नर-पिशाच	अत्यन्त क्रूर आदमी
निःसत्त्व	कमज़ोर, दुर्बल.
नियत	निश्चित.
निराकरण	दूरीकरण, निवारण.
निराशा	हताशा, आशा का अभाव.
निरुद्योगी	बेकार, बेकाम, उद्योग रहित.
निर्जन	एकान्त, सुनसान.
निर्भर	आश्रित, अवलम्बित.
निषिद्ध	मना किया हुआ.
निस्पृह	निरीह, इच्छा रहित.
पटल	स्थल.
पट्ट पड़ना	बैठ जाना.
पतन	अवनति, गिरना.
पतित	गिरा हुआ.
पदाधिकार	हक, हुकूमत.
परिवर्तन	बदलना.
परिस्थिति	हालत, दशा, अवस्था.
प्रकृतिजन्य	स्वाभाविक, स्वभाव से होने वाला.
प्रतिष्ठित	इज्जतदार.
प्राणप्रण	अत्यन्त प्रयास, प्राणत्याग तक की प्रतिज्ञा.
पात्र	व्यक्ति.
प्रादुर्भाव	उद्भूति, प्रकट होना.
प्रौढ़-अवस्था	यौवन के बाद की अवस्था.
फहराना	फर्राना, उड़ना.
बकभक	बकबक, बकवाद.
बसेरा	निवास.
भविष्य	होनहार, आगामी
भावी	आगे होने वाला.

शब्द	अर्थ
मदोन्मत्त	घमण्डी, घमण्ड में पागल.
मनुष्यत्व	आदमियत.
मादा	दूषित कफ आदि.
मार्गदर्शक	रास्ता बताने वाला.
मार्दव	निरभिमानता.
मालिन्य	मलीनता.
मितव्ययी	हैसियत के अनुसार खर्च करने वाला.
मिश्रित	मिला हुआ.
मृदु	नरम.
मृदुभाषण	नरम बोली.
युवती	जवान स्त्री.
रहन सहन	वर्ताव, चालचलन.
रहस्य	गूढ़ तत्त्व.
लौकी	घिया.
वस्तुतः	वास्तव में.
वासना	संस्कार.
विकसित	खिला हुआ.
विक्षेप	उच्चाट, उदासी.
विचलित	भ्रष्ट, चलित, डिगा हुआ.
विजयशील	विजेता, जीतने वाला.
विभव	विभूति, ऐश्वर्य.
विरक्ति	वैराग्य, उदासी.
विलीन	नष्ट, गायब.
विशेषज्ञता	विशेष जानकारी.
विषमता	विभिन्नता, समानता न होना.
विस्मरण	भूलना, विसरना
वेग	शीघ्रता, तेज़ी, धारा.
व्यक्ति	शख्स, मनुष्य.
शठ	मूर्ख.
शपथ	सौगन्ध, कसम.
श्रेयस्कर	कल्याणकारी, अच्छा.
संकल्प	प्रतिज्ञा.
संचार	प्रचार.
संडमुसंडे	हट्टे कट्टे, मोटे ताज़े.
संयमन	निरोध, निग्रह.
सत्ताधारी	अधिकारी.
सत्त्व	सत.
सदृश	समान, सरीखा.
सदैव	हमेशा ही.

शब्द	अर्थ	शब्द	अर्थ
सन्मार्ग	अच्छा रास्ता.	सिनेमा	बाइस्कोप.
सभ्य	योग्य, अच्छा मनुष्य.	सौम्य	शान्त.
सम्मुख	सामने, समक्ष.	स्वार्थपरायणता	स्वार्थीपन.
सर्वस्व	सब कुछ, सब धन	स्वावलम्बन	स्वाश्रय, अपने पैरों खड़ा होना.
सात्त्विक	सत्त्व गुण वाला.	हृष्टपुष्ट	मोटा ताजा, बली.
सात्त्विकवृत्ति	सरल प्रकृति.		
साहस	धैर्य, ढाढ़स.		

इति शुभमस्तु

पुस्तक मिलने का पता—

अगरचंद भैरोंदान सेठिया,

जैन लायब्रेरी (शास्त्र भण्डार)

बीकानेर (राजपूताना)